स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–18, अंक–2, फाल्गुन–2066, फरवरी, 2010

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर-8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली-110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011-26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 से मुद्रित।

आवरण कथा-5

भारी जन आंदोलन और ठोस तथ्यों के आधार पर लगभग 13 बड़े राज्यों ने न केवल बी.टी. बैंगन पर प्रतिबंध लगाया बल्कि साथ ही साथ केन्द्र सरकार को भी बी.टी. बैंगन को अनुमति न देने के लिए आग्रह किया।

कवर पेज

अ नु क्र म

आवरण लेख
बी.टी. बैंगन पर स्वदेशी की जीत
– स्वदेशी संवाद 5

प्रतिक्रिया
महंगाई की खोखली दलीलें
– देविन्दर शर्मा 8

अर्थतंत्र
भारत में आर्थिक मंदी का नहीं – महंगाई का दौर है
– डॉ. जय प्रकाश मिश्र 11

आस्था
जो गंगा के मन बसे
– विजय कुमार 12

पर्यावरण
कैसे बने गंगा स्वच्छ
– राजेन्द्र सिंह 16

चिंतन
किस हाल में है देश का स्वास्थ्य ढांचा
– उमेश चतुर्वेदी 20

मुद्दा
बच सकता है लाखों बच्चों का जीवन
– भारत डोगरा 24

विचार–विमर्श
साम्यवाद की असलियत
– बलबीर पुंज 26

पहल
प्रतिभाओं की घर वापसी का दौर
– जयंतीलाल भंडारी 28

समस्या
विकलांगों की बस्ती में सत्ता की खामोशी
– आवेश तिवारी 30

बाजारवाद
भारतीय खुदरा व्यापार का भविष्य
– बंदे शंकर सिंह 34

समाचार परिक्रमा–4 / रपट–29
घूमती कलम–32 /आंदोलन–36

पाठकनामा

कैसे खत्म किया जाए आतंकवाद

मैं स्वदेशी पत्रिका (हिंदी–अंग्रेजी) काफी दिनों से पढ़ रहा हूँ। पत्रिका में सभी तरह की समस्याओं को उजागर किया जाता है। लेकिन आतंकवाद पर कोई ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता। जब कि इस समय आतंकवाद हमारे घर दरवाजे तक पहुंच गया है। खैर पर्यावरण, स्वास्थ्य, जनसंख्या और शिक्षा पर पत्रिका में छपने वाले लेख युवा पीढ़ी के लिए काफी ज्ञानवर्द्धक व लाभदायक हैं।

स्वदेशी पत्रिका ने बढ़ती महंगाई को भी लगातार उठाया है। वर्तमान सरकार महंगाई को लेकर गंभीर नजर नहीं आ रही है। सिर्फ बहानेबाजी और एक दूसरे पर दोषारोपण कर हमारे मंत्री अपनी जिम्मेदारी निभाने का स्वांग कर रहे हैं और प्रधानमंत्री को देखिए, जिन्हें एक बहुत ज्ञानी अर्थशास्त्री होने का सम्मान प्राप्त है, वे भी हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। उन्हें भी महंगाई का कारण समझ नहीं आ रहा है। वाह रे अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री।

कुछ लोग जो अपने को प्रोग्रेसिव और अमन का दूत मानते हैं वे पाकिस्तान से बातचीत फिर शुरू करने का दबाव सरकार पर बनाना चाहते हैं। उन्हें यह भान नहीं कि पाकिस्तान अपनी किसी करनी पर पछताने या भविष्य में ना होने का वचन नहीं देना चाहता यानी हर बार सिर्फ हमें ही झूक कर बातचीत करना पड़ेगा। पाकिस्तान आतंकवादियों को हमारे यहां भेजता रहे, हमारे लोगों की जान लेता रहे। हमारी अर्थव्यवस्था को चौपट करने का कुचक्र करे और हम दोस्ती की बात करें। उनसे हमें यही कहना है– ***''वोट बैंक को छोड़ो, पहले देश हित की सोचो''*** तभी समाज और देश की एकता भी मजबूत होगी।

– धीरेन्द्र बजाज (अध्यापक), दिल्ली

सभी भाषा को सम्मान दो

कितने दुख की बात है देश में फिर से भाषा के नाम पर लड़ाई शुरू हो गई है। कहीं कोई मराठी होने को मुद्दा बनाता है तो कहीं हिंदी को राष्ट्र भाषा के रूप में मिली मान्यता पर सवाल खड़े किए जाते हैं। ज्यादा अच्छा तो यह होता कि हम किसी भाषा का विरोध करने के बजाए सभी भाषा का सम्मान करें। स्वदेशी पत्रिका के माध्यम से हम उत्तरांचल सरकार को बधाई देते हैं जिसने संस्कृत को द्वितीय राज भाषा का दर्जा देकर भारत की संस्कृति के प्रति अपनी विनम्रता दिखाई है।

– राकेश कुमार दास, मीडिया अपार्टमेंट, इंदिरापुरम्, गाजियाबाद

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क ***'स्वदेशी पत्रिका'*** दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्क: 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

भगवान ने पाकिस्तान जनित आतंकवाद को खत्म करने के लिए हमें पांच– पांच अवसर दिए लेकिन हर बार हमने उन्हें गवां दिया।

– मान. इन्द्रेश जी
संघ पदाधिकारी

गुलाम कश्मीर में छुपे कश्मीरी युवकों को बिना किसी शर्त बुलावे का गलत इस्तेमाल हो सकता है।

गुलाम नवी आजाद
केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्री

अगर अशोक चव्हाण फिल्म के बजाए पुणे में सुरक्षा व्यवस्था पर ध्यान देते तो वहां विस्फोट नहीं होता। यह सब उनके पाप का प्रतिफल है।

उद्धव ठाकरे
कार्यकारी अध्यक्ष शिव सेना

संपादकीय

बी.टी. पर जीत सिर्फ प्रतिकात्मक है

केंद्र सरकार ने देश में फिलहाल बीटी बैगन की खेती पर प्रतिबंध लगा दिया है। देश के सात प्रमुख शहरों में हजारों लोगों के साथ सीधी बातचीत से मिले संदेश के बाद पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने कहा कि बीटी बैगन को फिलहाल मंजूरी नहीं दी जा सकती।

इस मसले पर लंबी लड़ाई लड़ रहे पर्यावरणविद, सामाजिक कार्यकर्त्ता और स्वदेशी जागरण मंच जैसे संगठनों ने इस जीत पर खुशी जताने के बजाए सावधान रहने की सलाह दी है। क्योंकि भारतीय खेती और बीज उद्योग पर नजर गड़ाए विदेशी कंपनियां हार मानने के बजाए नए सिरे से अपना प्रयास शुरू कर देंगी। इस मामले में उनका इतिहास सबको मालूम हैं। यहां के राजनेताओं, सरकारी मशीनरी और अफसरों को लालच देने के बूते ये विदेशी कंपनियां कई बार पिछले दरवाजे से भारत में प्रवेश कर चुकी हैं। अरबों डॉलर के खाद्य बाजार में अपना प्रभुत्व जमा चुकी कारगिल जैसी विदेशी कंपनियां यहां लगभग सब्जियों के बीज पर अपना एकाधिकार स्थापित कर चुकी हैं। उपभोक्ताओं को यह मालूम ही नहीं हुआ कि उनकी थाली में पड़ने वाली सब्जियों की कब प्रजाति बदल गई। उत्पादन बढ़ाने के नाम पर कब उन्होंने स्वादहीन बना दिया गया।

अब तो उनकी जीन बदलने की तैयारी चल रही है। बीटी कपास के बाद बीटी बैगन और उसके बाद बीटी भिंडी और फिर बीटी कद्दू। विदेशी कंपनियों ने भारतीय खाद्य पदार्थ को अपने हिसाब से हांकने के ये तो घोषित प्रयास किए हैं, अघोषित रूप से बाजार में इतनी तरह की दवाएं और सूईयां चल चुकी है जिनका प्रयोग भोले–भाले किसान बिना यह जाने कर रहे है कि इनके अत्यधिक इस्तेमाल से एक दिन सबकुछ जहरीला बन जाएगा। भैस से अधिक दूध निकालने के लिए सूईयां लगाई जा रही हो या कद्दू को भी बड़ा करने के लिए ऐसी ही सूईयों का इस्तेमाल हो रहा है। इसलिए बीटी बैगन पर इस जीत से इतराने की जरूरत नहीं। यह जीत सिर्फ प्रतिकात्मक हैं। असली लड़ाई अभी बाकी है।

हम क्या खाएं, कैसे खाएं। क्या उगाएं, कैसे उगाएं। यह हमें कोई बताए तो ठीक नहीं है। दुनिया को जानकारी देने वाला भारत आज खाद्य पदार्थों के मामले में विदेशी कंपनियों का पिछलग्गू बन जाए तो यह हमारी संस्कृति और परंपरा पर ही कुठाराघात होगा। हमारे यहां भौगोलिक परिस्थितियों और प्राकृतिक संसाधनों के साथ सामंजस्य बिठाते हुए उत्पादन की संस्कृति रही है। हम खेती को रोजगार से ज्यादा धर्म का हिस्सा मानते हैं। हम किसी भी प्राकृतिक संपदा का अधिकतम दोहण के बजाए उनका संरक्षण करते रहे है। शायद इसीलिए हमारें यहां राज्य का अपना विशेष भोजन और अपनी विशेष खाद्य शैली है। हमने काल के विस्तार के साथ साथ अनाज और सब्जियों की हजारों किस्में विकसित की। पर विदेशी कंपनियां इस परंपरा को मारकर खेती को उत्पादन फैक्ट्री में बदलने और उस पर बैठकर राज करने के सपने संजोने में लगी हैं। वे चाहती हैं कि भारत के गांव–गांव के लोग वहीं खाएं जो वे खिलाना चाहें। जरूरत और आवश्यकता के अनुसार नहीं, उनकी व्यावसायिक भूख के अनुसार। इसके लिए वे उत्पादन बढ़ने और खेती को आसान बनाने का झांसा दे रही हैं। इसे समझना पड़ेगा। समाज को और सामाजिक संगठन को अपनी जिम्मेदारी समझनी पड़ेगी। खेती हमारी विरासत है और विरासत उधार की नहीं होती।

हिंदी राष्ट्र भाषा नहीं : हाईकोर्ट

इसे हम अपना दुर्भाग्य समझें या नादानी कि आज हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा दर्जा मिला या नहीं। यह भी एक बहस का मुद्दा छिड़ गया है। जब गुजरात हाईकोर्ट ने कहा है कि सामान्य से भारत में अधिकतर लोगों ने हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया है और कइ लोग हिन्दी बोलते हैं और देवनागरी लिपि में लिखते हैं। लेकिन ऐसा कोई रिकार्ड नहीं है जिससे यह स्पष्ट हो कि हिन्दी को देश की राष्ट्र भाषा घोषित करने के लिए कोई प्रावधान या आदेश जारी किए गए हो।

मुख्य न्यायाधीश एस जे मुखोपाध्याय और न्यायमूर्ति ए.एस. दवे ने हाल ही में एक जनहित याचिका की सुनवाई के दौरान यह टिप्पणी की। यह याचिका सुरेश कछाडिया ने पिछले साल दायर की थी जिसमें विभिन्न वस्तुओं की कीमतें, घटक, निर्माण तिथि आदि का ब्यौरा हिन्दी में प्रकाशित किया जाना अनिवार्य बनाने के लिए केन्द्र और राज्य सरकार को निर्देश देने का अनुरोध किया था।

गुजरात हाईकोर्ट के इस बयान से अब राष्ट्रभाषा हिन्दी को अपनी पहचान के लिए अब दस्तोवेजों की भी जरूरत पड़ेगी।

साइबर जंग से निपटने में भारत सबसे कमजोर

भारत दुनिया के उन देशों की श्रेणी में शामिल है जिन्हें साइबर हमलों और साइबर क्षेत्र में ताकतवर विरोधियों की चोरी छिपी घुसपैठ से निपटने के बारे में ज्यादा आत्मविश्वास नहीं है। सेंटर फॉर स्ट्रैटेजिक एंड इंटरनेशनल स्टडीज के लिए तैयार की गई मैककैफी की एक सर्वेक्षण रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत में एक तिहाई से ज्यादा मानते है कि साइबर क्षेत्र बड़े हमलों और उच्चस्तरीय विरोधियों की चोरी छिपे घुसपैठ से निपटने में भारत की तैयारी सबसे कमजोर है।

ग्रीन हाउस गैसों पर काबू न पाया तो तबाही

ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन जैसे–जैसे बढ़ रहा है, क्लाइमेट चेंज की समस्या वैसे–वैसे विकराल होती जा रही है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की एक रिपार्ट के अनुसार ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन अपने उच्चतम स्तर पर पहुंच चुका है। सन 1750 से शुरू हुए औद्योगिक युग के सफर में 2009 तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 97 फीसद की वृद्धि दर्ज हो चुकी है।

संयुक्त राष्ट्र की बुलेटिन के मुताबिक दुनिया में अंधाधुंध बढ़ते शहरीकरण के चलते कार्बन–डाई–आक्साइड (सीओटू) के विसर्जनमें जबर्दस्त वृद्धि हुई है। यह 383.1 पार्टूस पर मिलियन (पीपीएम) तक पहुंच चुकी है।

अपने प्रबंधन पर सबसे भरोसा करते हैं भारतीय कर्मचारी

वैश्विक मानव संसाधन साल्यूशंस प्रदाता केनेक्सा के एक सर्वेक्षण के मुताबिक दुनिया के दूसरे देशों की तुलना में भारतीय कर्मचारियों को अपने प्रबंधन की क्षमता पर सबसे ज्यादा भरोसा है। किसी भी कंपनी के बारे में राय बनाने में उसकी वरिष्ठ प्रबंधन स्तर की टीम मुख्य भूमिका निभाती है। सर्वेक्षण कहता है कि कंपनी का नेतृत्व करने वालों की क्षमता पर भरोसें के मामले में भरतीय कर्मचारी सबसे आगे है। सर्वेक्षणमें 69 प्रतिशत भारतीय कर्मचारियों को अपने वरिष्ठ प्रबंधन की क्षमताओं पर भरोसा है।

विकास दर नौ फीसद पर पहुंचेगी

योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोंटक सिंह अहलूवालिया के अनुसार वैश्विक आर्थिक मंदी से भारत सहित पूरा एशिया उबर चुका है और अगले वर्ष भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की विकास दर आठ फीसदी से अधिक रहेगी। इसके बाद जल्द ही यह नौ फीसद पर पहुंचेगी। वही दूसरी ओर अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (आईएमएफ) ने चेताया है कि आर्थिक वृद्धि दर का यह अनुमान ज्यादा है।

उत्तर भारतीय छात्रों को अब ब्रिटेन में पढ़ाने की इजाजत नहीं

भारत स्थित द यूके बार्डर एजेंसी ने अब उत्तर भारतीय छात्रों को अस्थाई तौर पर स्टूडेंट वीजा आवेदन को स्वीकार न करने का फैसला किया है। इस फैसले से हजारों उत्तर भारतीयों छात्रों की ब्रिटेन जाकर पढ़ने की उम्मीदें निराशा में बदल जाएंगी।

एक लाख को नौकरी देगा आईटी कंपनियां

आने वाले कुछ महीनों में आईटी से जुड़े लोगों के लिए काफी अच्छा है। क्योंकि आईटी के बुनियादी ढांचे पर खर्च व आउटसोर्सिंग बाजार में रौनक लौटने का असर हो रहा है।

जिसके कारण आने वाले महीनों में करीब एक लाख आईटी विशेषज्ञों की जरूरत पड़ेगी। एक सर्वेक्षण के अनुसार आईटी उद्योग 2010 में 19 से 20 प्रतिशत बढ़ेगा।

बी.टी. बैंगन पर स्वदेशी की जीत

केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री श्री जयराम रमेश द्वारा बी.टी. बैंगन पर अनिश्चित कालीन रोक लगाये जाने से फिलहाल देश ने राहत की सांस ली है। बी.टी. बैंगन के विरोध में पिछले लगभग कई माह से चल रहे आंदोलन को न केवल एक सफलता मिली है, बल्कि इस आन्दोलन के माध्यम से देशभर में बी.टी. बीजों को जबरन भारत पर थोपे जाने के विषय पर व्यापक बहस भी शुरू हुई है।

स्वदेशी जागरण मंच ने देश के सभी मुख्यमंत्रीओं को पत्र लिखकर बी.टी. बैंगन के खतरे से आगाह कराते हुए उन्हें अपने–अपने राज्य में बी.टी. बैंगन पर प्रतिबंध लगाने हेतु आव्हान भी किया। भारी जन आंदोलन और ठोस तथ्यों के आधार पर लगभग 13 बड़े राज्यों ने न केवल बी.टी. बैंगन पर प्रतिबंध लगाया बल्कि साथ ही साथ केन्द्र सरकार को भी बी.टी. बैंगन को अनुमति न देने के लिए आग्रह किया। कई स्थानों पर तो राज्य सरकारों के प्रतिनिधियों ने भी बी.टी. बैंगन का खुले आम विरोध किया।

■ स्वदेशी संवाद

केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री श्री जयराम रमेश द्वारा बी.टी. बैंगन पर अनिश्चित कालीन रोक लगाये जाने से फिलहाल देश ने राहत की सांस ली है। बी.टी. बैंगन के विरोध में पिछले लगभग कई माह से चल रहे आंदोलन को न केवल एक सफलता मिली है, बल्कि इस आन्दोलन के माध्यम से देशभर में बी.टी. बीजों को जबरन भारत पर थोपे जाने के विषय पर व्यापक बहस भी शुरू हुई है।

बी.टी. बैंगन के बीजों को पर्यावरण संबंधी क्लीन चिट देने वाली तथाकथित विशषज्ञ कमेटी की पोल खुलने से लेकर पर्यावरण मंत्राालय को हजारों प्रतिवेदन भेजें जाने के बाद केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश के पास इस हेतु जनसुनवाईयां करने के अतिरिक्त कोई चारा भी नहीं था। देश भर में 6 स्थानों पर जनसुनवाईयां आयोजित की गई, इन जनसुनवाईयों में न केवल बी.टी. बैंगन के संबंध में तमाम सवाल और शंकाएं उठाई गयी बल्कि लगभग सभी स्थानों पर स्वदेशी जागरण मंच के कार्यकर्ताओं ने भारी आक्रोश के साथ प्रदर्शन भी किया।

स्वदेशी जागरण मंच ने देश के सभी मुख्यमंत्रीओं को पत्र लिखकर बी.टी. बैंगन के खतरे से आगाह कराते हुए उन्हें अपने–अपने राज्य में बी.टी. बैंगन पर प्रतिबंध लगाने हेतु आव्हान भी किया। भारी जन आंदोलन और ठोस तथ्यों के आधार पर लगभग 13 बड़े राज्यों ने न केवल बी.टी. बैंगन पर प्रतिबंध लगाया बल्कि साथ ही साथ केन्द्र सरकार को भी बी.टी. बैंगन को अनुमति न देने के लिए आग्रह किया। कई स्थानों पर तो राज्य सरकारों के प्रतिनिधियों ने भी बी.टी. बैंगन का खुले आम विरोध किया।

यह जन दबाव का ही असर है कि केंद्र सरकार को बीटी बैगन की खेती को मंजूरी न देने पर मजबूर होना पड़ा। स्वदेशी जागरण मंच समेत लगभग दो सौ संगठनों के आंदोलन के सामने मायको जैसी कंपनियों और सरकार में बैठे उनके आकाओं को मुंह की खानी पड़ी। बीटी बैगन के खिलाफ आवाज बुलंद करने वालों में न सिर्फ किसान है, बल्कि, कृषि वैज्ञानिक, डॉक्टर और पर्यावरण विद भी है। कई राज्य सरकारों व मंत्रियों ने सीधे प्रदर्शन में हिस्सा लिया। केरल, बिहार, कर्नाटक, गुजरात, आंध्र प्रदेश, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु,, उड़ीसा, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल में बड़ी–बड़ी रैलिया निकाली गई। खेती विरासत की कविता कुरुगंती ने इस आंदोलन की तुलना महात्मागांधी के हिंद स्वराज आंदोलन से करते हुए कहा कि बीटी के खिलाफ यह आंदोलन अपनी आजादी बचाने का आंदोलन है। उन्होंने कहा कि अपनी बीज और खाद्य संप्रभुता बचाने के लिए आवश्यक है कि हम बीटी को बाहर करें।

बीटी बैगन के खिलाफ आवाज बुलंद करने वालों में न सिर्फ किसान है, बल्कि, कृषि वैज्ञानिक, डॉक्टर और पर्यावरण विद भी है। कई राज्य सरकारों व मंत्रियों ने सीधे प्रदर्शन में हिस्सा लिया। केरल, बिहार, कर्नाटक, गुजरात, आंध्र प्रदेश, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु,, उड़ीसा, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल में बड़ी–बड़ी रैलियां निकाली गई।

चेन्नई में हजारों लोगों ने बैगन सत्याग्रह किया। मशहूर जीन वैज्ञानिक वंदना शिवा के नेतृत्व में हजारों लोगों ने भूख हड़ताल की। कई जगहों से साइकिल रैलियां निकालकर लोगों को

बी.टी. बैंगन के बीजों को पर्यावरण संबंधी क्लीन चिट देने वाली तथाकथित विशषज्ञ कमेटी की पोल खुलने से लेकर पर्यावरण मंत्राालय को हजारों प्रतिवेदन भेजें जाने के बाद केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश के पास इस हेतु जनसुनवाईयां करने के अतिरिक्त कोई चारा भी नहीं था। देश भर में 6 स्थानों पर जनसुनवाईयां आयोजित की गई, इन जनसुनवाईयों में न केवल बी.टी. बैंगन के संबंध में तमाम सवाल और शंकाएं उठाई गयी बल्कि लगभग सभी स्थानों पर स्वदेशी जागरण मंच के कार्यकर्ताओं ने भारी आक्रोश के साथ प्रदर्शन भी किया।

बीटी नुकसान के बारे में लोगों को जागरूक किया।

फसलों के जीन बदल कर देश में एकाधिकार स्थापित करने के मंसूबे बनाने वाली विदेशी कंपनियों ने यों तो पूरी तैयारी कर ली थी। उन्होंने अपने समर्थन में सरकार के कुछ मंत्रियों, अफसरों और यहां तक कि वैज्ञानिकों को भी उतार लिया था। भारत के कृषि मंत्री शरद पवार, जिन पर देश की खेती विरासत को संभालने की जिम्मेदारी है, ने तो बीटी बैगन के प्रवक्ता का पद संभाल लिया। उन्होंने बिना किसी तथ्य के यहां तक कह डाला 'बीटी बैगन देश और किसानों के वृहद हित में है। इससे यहां के नागरिकों को खाद्य सुरक्षा मिलेगी।' उन्होंने यहां तक कह दिया कि हमारे वैज्ञानिकों ने बीटी बैगन को पूरी तरह सुरक्षित पाया है। पंवार का यह बयान तथ्य से परे है। मायको, जो देश में बीटी बैगन की फसल शुरू करने की मुहिम में जी जान से जुटी है, ने भी अभी तक यह सिद्ध करने में असफल रही है कि बीटी फसलों से मानव, जानवर या पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं है। भारत सरकार को उसने अभी तक जो भी तथ्य दिए हैं उनका वैज्ञानिक अध्ययन नहीं किया गया है।

बहरहाल केंद्रीय पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश की इस घोषणा के बाद कि

अभी बीटी कपास के अलावा किसी और बीटी फसल को मंजूरी नहीं दी जा रही, है, देश ने राहत की सांस ली है। इस मामले का सबसे सुखद पहलू यह है कि देश के किसान और किसानी के समर्थक इस मुद्दे पर एक जुट हो गए हैं। खेती की तकनीक देशानुकूल ओर पर्यावरण हितैषी हो इस पर किसानों के अलावा वैज्ञानिकों और पर्यावरणविदों ने भी मुहिम शुरू कर दी है।

इस मुहिम को तब और बल मिला जब कुछ राज्य सरकारों ने भी बीटी के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद बी। खास कर भाजपा शासित उत्तरांचल, हिमाचल और कर्नाटक ने मामले में पहल की। केंद्र के फैसले से पहले ही येदुरप्पा ने घोषणा कर दी कि कर्नाटक में बीटी बैगन की खेती नहीं होगी। उन्होंने कहा कि बैगन कर्नाटक की मुख्य सब्सिजी है। यहां के किसान पहले से ही बैगन की दर्जनों किस्में उगा रहे हैं। उन्होंने साफ कहा कि बीटी कपास के अलावा कोई भी बीटी फसल नहीं उगाई जाएगी। ❑

इस मुहिम को तब और बल मिला जब कुछ राज्य सरकारों ने भी बीटी के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद बी। खास कर भाजपा शासित उत्तरांचल, हिमाचल और कर्नाटक ने मामले में पहल की। केंद्र के फैसले से पहले ही येदुरप्पा ने घोषणा कर दी कि कर्नाटक में बीटी बैगन की खेती नहीं होगी। उन्होंने कहा कि बैगन कर्नाटक की मुख्य सब्सिजी है। यहां के किसान पहले से ही बैगन की दर्जनों किस्में उगा रहे हैं। उन्होंने साफ कहा कि बीटी कपास के अलावा कोई भी बीटी फसल नहीं उगाई जाएगी।

महंगाई की खोखली दलीलें

मीडिया अक्सर मुझसे पूछता है कि फिर दालों की कीमतें राकेट की तरह आसमान में क्यों जा रही हैं? मेरा उत्तर साधारण और सीधा होता है। कीमतें इसलिए बढ़ रही हैं, क्योंकि बड़े पैमाने पर जमाखोरी की जा रही है, कालाबाजारी की जा रही है और कीमतों को लेकर सट्टेबाजी हो रही है।

■ **देविन्दर शर्मा**

सब्जियां बेहद महंगी हैं, फल तो न खाने में ही भलाई है और आम आदमी की दाल तो उसकी पहुंच से ही बाहर हो गई है। हद तो यह है कि आटा और दूध के दामों में भी अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। अर्थशास्त्रियों ने हमेशा की तरह अस्वाभाविक महंगाई के लिए मांग और आपूर्ति की कठिनाइयों को दोष दिया है। राजनेता एक–दूसरे पर दोष डाल रहे हैं। उनकी ओर से अक्सर राज्य सरकारों को भी दोष दिया जाता है कि वे कीमतों पर नियंत्रण करने में अक्षम साबित हो रही हैं

खाद्य पदार्थों की कीमतों ने सभी रिकार्ड तोड़ दिए हैं। खाने की चीजों के दाम में लगभग 20 प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी है और परिणाम यह है कि आम उपभोक्ता अपनी खाली जेबें बाहर निकाले हताश–निराश खड़ा है। टेलीविजन चैनलों समेत पूरा मीडिया बढ़ती कीमतों को लेकर बिना थके चिल्ला रहा है। बड़ी खबर मीडिया में बार–बार दिखाई–पढ़ाई जा रही है। सभी संभावित कोण पर निगाह रखते हुए मीडिया ने बढ़ती महंगाई का मामला बड़ी दिलचस्पी से आगे बढ़ाया है। खेतों से लेकर खाने की प्लेट तक, घरेलू महिलाओं से लेकर राजनेताओं तक और योजना आयोग के उपाध्यक्ष से लेकर प्रधानमंत्री तक–सभी महंगाई को लेकर चिंतित नजर आते हैं, लेकिन इसके बावजूद आसमान छूते भावों से राहत का कोई संकेत नजर नहीं आता।

सब्जियां बेहद महंगी हैं, फल तो न खाने में ही भलाई है और आम आदमी की दाल तो उसकी पहुंच से ही बाहर हो गई है। हद तो यह है कि आटा और दूध के दामों में भी अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। अर्थशास्त्रियों ने हमेशा की तरह अस्वाभाविक महंगाई के लिए मांग और आपूर्ति की कठिनाइयों को दोष दिया है। राजनेता एक–दूसरे पर दोष डाल रहे हैं। उनकी ओर से अक्सर राज्य सरकारों को भी दोष दिया जाता है कि वे कीमतों पर नियंत्रण करने में अक्षम साबित हो रही हैं और इसी दौरान केंद्र सरकार को भी जिम्मेदार ठहराकर सही नीतियां लागू करने में उसकी असफलता को रेखांकित किया जा रहा है।

मुझसे अनगिनत बार यही सवाल किया जाता है और पिछले कई माह से

मैं बार–बार इस पर जोर दे रहा हूं कि खाद्य पदार्थों की कीमतों में वृद्धि का आपूर्ति की कठिनाइयों से कोई लेना–देना नहीं है। मीडिया अक्सर मुझसे पूछता है कि फिर दालों की कीमतें राकेट की तरह आसमान में क्यों जा रही हैं? मेरा उत्तर साधारण और सीधा होता है। कीमतें इसलिए बढ़ रही हैं, क्योंकि बड़े पैमाने पर जमाखोरी की जा रही है, कालाबाजारी की जा रही है और कीमतों को लेकर सट्टेबाजी हो रही है।

मैं लंबे अर्से से इस तरह के व्यापार के खिलाफ अभियान छेड़ने की वकालत कर रहा हूं। मैं नहीं समझ पाता हूं कि छोटे विक्रेताओं और हाकरों को कैसे अपनी मनमानी के बल पर देश को बंधक बनाने की छूट दी जा रही है। भावनाओं द्वारा संचालित बाजार आम उपभोक्ताओं पर भारी पड़ रहा है। दालों का उदाहरण लें। अरहर दाल की कीमत आसमान छू रही है। अन्य दालों की कीमतों में भी भारी वृद्धि हुई है और हमारे ऊपर यह विचार लादा जा रहा है कि चूंकि दालों के उत्पादन में गिरावट आई है इसलिए कीमतें बढ़ रही हैं। हममें से कई लोग उत्पादन में गिरावट को खरीफ के मौसम में सूखे की स्थितियों से भी जोड़ेंगे, लेकिन यह सही नहीं है। दालों के उत्पादन में शायद ही कोई अंतर आया हो।

सन् 2008 में दालों का उत्पादन 147.6 लाख टन था, जबकि 2009 में यह 146.6 लाख टन रहा। इसका मतलब है कि उत्पादन में मात्र एक लाख टन की गिरावट आई। दूसरे शब्दों में कहें तो 2008 और 2009 में दालों का उत्पादन लगभग स्थिर रहा। महंगाई के मामले में दूसरी दलील यह है कि मांग के मुकाबले आपूर्ति भारी पड़ रही है। कुछ अर्थशास्त्रियों

ने बताया है कि दालों की मांग 170 लाख टन के आसपास है, लेकिन मैं नहीं जानता कि उनका यह आकलन किन तथ्यों पर आधारित है।

रोचक बात यह है कि अर्थशास्त्रियों का यह अनुमान यह धारणा उत्पन्न करता है कि 2009 में लोगों ने अचानक ज्यादा दाल खानी शुरू कर दी है, क्योंकि यदि वाकई मांग में वृद्धि हो रही है तो 2008 में भी दालों की कीमतों में ऐसी ही वृद्धि होनी चाहिए थी। यदि आप इस तर्क को स्वीकार भी कर लें तो इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि भारत ने 25 लाख टन दाल का इस वर्ष आयात किया है। यदि इस मात्रा को उत्पादित दालों में जोड़ दिया जाए तो बाजार में दालों की कुल उपलब्धता 171.6 लाख टन हो जाती है। इसका अर्थ है कि हमने मांग और आपूर्ति के अंतर को समाप्त कर दिया। अब क्या कोई यह बताएगा कि दालों की कीमतें क्यों बढ़ती जा रही हैं?

कीमतें इतनी तेजी से ऊपर क्यों जा रही हैं? इसका जवाब एकदम साधारण है। व्यापार ने आपूर्ति को रोक रखा है और वह भावनाओं का भरपूर दोहन करना चाहता है। इतना अधिक कि एक छोटा सा रीटेलर भी 400 प्रतिशत तक कमीशन वसूल कर रहा है।

मूल सवाल अभी भी कायम है कि कीमतें इतनी तेजी से ऊपर क्यों जा रही हैं? इसका जवाब एकदम साधारण है। व्यापार ने आपूर्ति को रोक रखा है और वह भावनाओं का भरपूर दोहन करना चाहता है। इतना अधिक कि एक छोटा सा रीटेलर भी 400 प्रतिशत तक कमीशन वसूल कर रहा है। उदाहरण के लिए आलू का, किसान अपनी उपज को मात्र तीन रुपये प्रति किलो बेच पाता है, लेकिन आम उपभोक्ता को वही आलू करीब तीस रुपये प्रति किलो मिल रहा है। इसका मतलब है कि बाजार के लोग, जिनमें थोक एजेंट,

कमीशन एजेंट और अनगिनत बिचौलिये शामिल हैं, आपकी जेब लूट रहे हैं।

खाद्य पदार्थों के दामों में बढ़ोतरी की कहानी विडंबनाओं से भरी हुई है। बढ़ती महंगाई के लिए हर तरह के सिद्धांत बताए जा रहे हैं। वैश्विक वित्तीय मंदी के असर से लेकर अंतरराष्ट्रीय बाजार में कीमतों में वृद्धि तक की चर्चाएं की जा रही हैं, लेकिन नियंत्रण के दो रास्तों पर किसी का ध्यान नहीं है। पहला और सबसे अधिक महत्वपूर्ण है व्यावसायिक मीडिया की भूमिका, जिसमें बिजनेस टीवी चैनल शामिल हैं। ये चैनल दिन–रात यह बताने में लगे हैं कि निवेशकों को किन खाद्य पदार्थों पर अपना पैसा लगाना चाहिए। जब कुछ टीवी चैनल दिन–रात फायदे की चीजों की चर्चा कर रहे हैं तो बाजार में उनकी कीमतों पर असर पड़ेगा ही। अनदेखा किया गया दूसरा पहलू यह है कि खाद्य पदार्थों की बड़ी रिटेल कंपनियों को किसी नियामक नियंत्रण के अभाव में मुक्त रूप से मुनाफा कमाने का मौका मिल रहा है। इन कंपनियों को जब भारत में प्रवेश की अनुमति मिली थी तो उन्होंने बिचौलियों को किनारे कर देने का वायदा किया था और इस आधार पर उपभोक्ताओं

को सस्ती दरों पर चीजें उपलब्ध कराने की बात कही थी। उनके इस वायदे पर ही सरकार ने उन्हें कई तरह की छूट दी थी, जिनमें सस्ती दरों पर जमीन उपलब्ध कराना शामिल था।

इन संगठित रिटेल कंपनियों ने बड़े शहरों के साथ–साथ छोटे–छोटे कस्बों में भी अपनी दूकानें स्थापित कीं। संगठित रिटेल कंपनियों के प्रसार से कीमतों में किसी तरह की कमी नहीं आई। दाल, सब्जी और फलों के जो दाम सुपर मार्केट में हैं वहीं खुले बाजार में भी हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो बड़ी रिटेल कंपनियां फेरी लगाने वालों से बेहतर नहीं सद्धि हुईं। वे भी चार सौ प्रतिशत तक कमीशन हड़प रही हैं। अंतर इतना है कि जहां खुले बाजार में यह मुनाफा कई लोगों के बीच बंटता है वहीं बड़ी रिटेल कंपनियां अकेले ही सारा मुनाफा हजम कर रही हैं।

साफ है, जैसा सोचा गया था उसके विपरीत बड़ी रिटेल कंपनियां उस मकसद को पूरा कर पाने में असफल रही हैं जो उन्हें अनुमति देते हुए सोचा गया था। सरकार को चुनिंदा केंद्रों पर सस्ता आटा और दाल बेचने की दिखावटी कोशिश करने के बजाय सख्ती दिखानी चाहिए और बड़ी रिटेल कंपनियों को निर्देश देना चाहिए कि वे खाद्य पदार्थों की कीमतों में 25 प्रतिशत की कमी करें। एक बार जब सुपर मार्केट में खाद्य पदार्थों की कीमतें नीचे आ जाएंगी तो खुले बाजार के पास भी कीमतें घटाने के अलावा अन्य कोई विकल्प नहीं होगा। स्पष्ट है, बड़ी रिटेल कंपनियों को महंगाई पर नियंत्रण के लिए शक्तिशाली औजार के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। ❑

खाद्य पदार्थों के दामों में बढ़ोतरी की कहानी विडंबनाओं से भरी हुई है। बढ़ती महंगाई के लिए हर तरह के सिद्धांत बताए जा रहे हैं। वैश्विक वित्तीय मंदी के असर से लेकर अंतरराष्ट्रीय बाजार में कीमतों में वृद्धि तक की चर्चाएं की जा रही हैं, लेकिन नियंत्रण के दो रास्तों पर किसी का ध्यान नहीं है। पहला और सबसे अधिक महत्वपूर्ण है व्यावसायिक मीडिया की भूमिका, जिसमें बिजनेस टीवी चैनल शामिल हैं। ये चैनल दिन–रात यह बताने में लगे हैं कि निवेशकों को किन खाद्य पदार्थों पर अपना पैसा लगाना चाहिए।

भारत में आर्थिक मंदी का नहीं - महंगाई का दौर है

महंगाई दोगुनी और किन्हीं–किन्हीं अनिवार्य वस्तुओं पर तीन गुनी कीमतें हो जाने से मध्यम वर्गीय परिवारों की आय का एक बहुत बड़ा भाग अनिवार्य आवश्यक वस्तुओं के उपभोग पर ही व्यय हो जाता है। परिणामस्वरूप आराम की और विलासिता की वस्तुयें खरीदने के लिये पैसे ही नहीं बचते हैं।

■ डॉ. जय प्रकाश मिश्र

वैश्विक आर्थिक मंदी के दौर में भारत में मंदी का प्रभाव कम, महंगाई का प्रभाव ज्यादा देखा गया। आज अनाज हो चाहे फल, सब्जी या खाद्यान्न एवं तेल सभी के दामों में दिन–प्रति–दिन इजाफा दृष्टिगोचर हो रहा है। महंगाई के कारण तीन से 10 हजार तक कमाने वाले शहरवासियों का गुजारा नहीं हो रहा है। कहीं न कहीं महंगाई के लिये किसी एक पक्ष को दोषी न मानकर सभी पक्षों को दोषी मानना उचित होगा।

यदि मंदी भारत में होती तो मंदी वर्ष में वस्तुओं की मांग कम होना चाहिये था या कारोबार में वित्तीय इजाफा नहीं होना था। तथ्य बताते है कि इन्दौर के ट्रेजर आईलैंड माल में 2005 में बिजनेस 120 करोड़ का था, 2006 में 150 करोड़ का तथा 2008 में 180 करोड़ का बिजनेस इस माल में हुआ। जबकि 2008 में मंदी वर्ष माना जाता है। अतः तथ्य इस बात को बता रहे है कि यदि भारत में मंदी का रूख होता तो व्यवसाय में कारोबार को बढ़ने की बजाय घटना चाहिये था। परंतु ऐसा नहीं हुआ। अनिवार्य आवश्यकताओं की वस्तुओं में कारोबार यथावत बना रहा।

बाजारवादी इस व्यवस्था में डेली लाभ कमाने के चक्कर में मुनाफाखोरों और जमाखोरों ने मानसून की बदलती चाल का भी बहुत लाभ लिया। महंगाई बढ़ाने के लिये जहाँ तक मैं समझता हूँ तीन बातें महत्वपूर्ण है – प्रथम विगत तीन–चार वर्षों से देश असंतुलित मानसून का प्रभाव रहा, दूसरा सरकार ने कीमत नियंत्रण अथवा कीमत स्थिरता के लिये विशेष कारगर कदम नहीं उठाये और तीसरा मुनाफाखोरों सट्टाबाजों एवं जमाखोरों ने खाद्यान्न का कृत्रिम अभाव दिखाकर खूब कमाया।

तथ्य बताते हैं कि बीते वर्ष खाने के सामान की महंगाई 17.47 प्रतिशत तक पहुंच गई जो वर्ष 2008 में 10.75 प्रतिश थी। अधिक स्पष्ट शब्दों में और महंगाई के तथ्यों का उजागर किया जाए तो आम उपभोक्ता तक खाद्यान्न पहुँचते–पहुँचते और अधिक महंगे हो जाते हैं।

भारत में मध्यम वर्ग को महंगाई के इस भीषण दौर को झेलना पड़ रहा है। यह तो सर्वमान्य सत्य है कि उपभोक्ता सर्वप्रथम अपनी आय को जीवन की अनिवार्य आवश्कताओं पर व्यय करता है। अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाने के पश्चात् आरामदायक वस्तुओं पर व्यय करता है तत्पश्चात् विलासिता की वस्तुओं पर व्यय करता है। महंगाई दोगुनी और किन्हीं–किन्हीं अनिवार्य वस्तुओं पर तीन गुनी कीमतें हो जाने से मध्यम वर्गीय परिवारों की आय का एक बहुत बड़ा भाग अनिवार्य आवश्यक वस्तुओं के उपभोग पर ही व्यय हो जाता है। परिणामस्वरूप आराम की और विलासिता की वस्तुयें खरीदने के लिये पैसे ही नहीं बचते हैं।

विश्व के आर्थिक समीक्षक या विश्लेषक इसे भले ही मंदी का दौर कहें परंतु भारत के संदर्भ में यह बात उपयुक्त प्रतीत नहीं होती। सारांश रूप में यदि हम कहें तो भारत में तीन तरह के लोग निवास करते हैं। प्रथम उच्च वर्ग जिनका प्रतिशत कुल जनसंख्या का 5 प्रतिशत भी नहीं है। इन्हें महंगाई चाहे जितनी बढ़ जाए इनकी क्रय शक्ति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इस वर्ग के पास तो यह समस्या है कि अपनी आय को कहाँ–कहाँ निवेश कर दे या खर्च कैसे करे? द्वितीय वर्ग विशाल मध्यम वर्ग है। जो उपभोक्तावादी संस्कृति में विश्वास करता है और अपने लिये ही हर ऐसो–आराम की वस्तु चाहता है, परंतु इस वर्ग के पास आय सीमित है। इस कारण यह वर्ग महंगाई बढ़ जाने से अपने ज्ञान बढ़ाने या ऐशो–आराम की वस्तुयें नहीं खरीद पाता। इस मंदी या महंगाई के दौर में यही वर्ग सबसे अधिक प्रभावित हुआ। जिस कारण इनकी आराम और विलासिता की वस्तुओं की क्रय करने की शक्ति घट गई। तीसरा वर्ग जो हेन्ड टू माऊथ है जो रोज कमाना रोज खाना, इनकी नियति है। इस वर्ग में बचत कम है। आय इतनी अधिक नहीं है कि यह विलासिता की वस्तुयें खरीदने की क्षमता रखते हों। तथ्य बताते हैं कि भारत में आज भी असंगठित क्षेत्रों में लगे लगभग 20 प्रतिशत लोग 20 से 30 रुपए प्रतिदिन ही कमा पाते है। अतः इस वर्ग से तो उपभोक्तावादी संस्कृति को विकसित करने की कोई अपेक्षा आप करने से रहे, अर्थात् ये वर्ग क्रय शक्ति बढ़ाकर महंगाई के इस दौर में वस्तुओं की मांग बढ़ायेंगे।

ये सारे तथ्य इस बात का संकेत दे रहे हैं कि भारत में मंदी का नहीं महंगाई का दौर है। ❑

हरिद्वार कुंभ पर

जो गंगा के मन बसे

मेदिनी शाह ने केवल इतना ही कहा – यदि गंगा सचमुच मेरी माँ हैं, तो फिर वे स्वयं ही मेरे पास आ जाएंगी। यह कहकर उन्होंने काफी दूरी पर डेरा डाल दिया; पर सभी राजाओं के आश्चर्य की सीमा न रही, जब उन्होंने देखा कि कुंभ के स्नान से पूर्व ही गंगा ने अपना मार्ग बदल लिया और टिहरी नरेश के डेरे के निकट पहुंच गयी। सब राजाओं ने टिहरी नरेश से जाकर क्षमा मांगी।

■ **विजय कुमार**

माँ गंगा भारत की प्राण रेखा है। यों तो दुनिया में नदियां अनेक हैं, भारत में भी पवित्र नदियों की कमी नहीं; पर गंगा जैसी पावन और मनभावन कोई नहीं है। जहां भी हिन्दू है, वहां उसने किसी तीर्थ–तालाब को ही गंगा कहकर उसे मन में बसा लिया। दुनिया भर में हिन्दू चाहे कहीं रहता हो; पर उसके घर में गंगाजल अवश्य मिलेगा। मरते समय दो बूंद गंगाजल मुंह में पड़ जाए, यह कामना हर हिन्दू की रहती है। भारत के सभी प्रसिद्ध कवियों ने गंगा की स्तुति की है। ठीक भी तो है, गंगा सबके मन में बसी है।

पर कुछ लोग ऐसे धन्यभाग भी होते हैं, जिन्हें गंगा मां ने ही अपने मन में बसाया है। जैसे बच्चे की जिद के आगे मां को झुकना पड़ता है, ऐसे ही उनके आह्वान पर गंगा मां भी दौड़ी चली आयी। आधुनिक युग के ऐसे कुछ लोगों का स्मरण हमें भी पावन करेगा।

गंगा लहरी के रचियता पंडितराज जगन्नाथ

पंडित जगन्नाथ का मुगल शासक शाहजहां के दरबार में बड़ा सम्मान था। दाराशिकोह ने इनकी सहायता से ही उपनिषदों का फारसी में अनुवाद कराया था। शाहजहां ने इन्हें पंडितराज की उपाधि से विभूषित किया था। एक बार दरबार में लवंगी नामक एक नर्तकी नाच रही थी। पंडित जगन्नाथ ने अपनी त्रिकाल दृष्टि से उसे पहचान लिया कि यह उनके पूर्वजन्म की प्रियतमा है। उन्होंने भरे दरबार में शाहजहां से उस नर्तकी को मांग लिया। शाहजहां ने नर्तकी को उनके साथ भेज दिया।

जगन्नाथ जी उसे शास्त्रीय विधि से शुद्ध किया और उसके साथ रहने लगे; पर इससे सब ओर उनकी बदनामी होने लगी। लोगों की बातों से दुखी होकर वे लवंगी को लेकर काशी में दश्वाश्वमेध

माँ गंगा भारत की प्राण रेखा है। यों तो दुनिया में नदियां अनेक हैं, भारत में भी पवित्र नदियों की कमी नहीं; पर गंगा जैसी पावन और मनभावन कोई नहीं है। जहां भी हिन्दू है, वहां उसने किसी तीर्थ–तालाब को ही गंगा कहकर उसे मन में बसा लिया। दुनिया भर में हिन्दू चाहे कहीं रहता हो; पर उसके घर में गंगाजल अवश्य मिलेगा। मरते समय दो बूंद गंगाजल मुंह में पड़ जाए, यह कामना हर हिन्दू की रहती है।

घाट की सीढ़ियों पर जा बैठे। उस घाट पर 52 सीढ़ियां हैं। उन्होंने लवंगी को गोद में बैठा लिया और गंगा की स्तुति में पद रचने लगे।

ऐसा कहते हैं कि वे एक पद रचते थे और गंगा एक सीढ़ी ऊपर चढ़ आती थी। जब उन्होंने 52वाँ पद रचा, तो गंगा ने ऊपर चढ़कर उन्हें अपनी गोद में समेट लिया। जब वे बीच जलधार में पहुंच गये, तो उन्होंने निवेदन किया – माँ, जब गोद में ले ही लिया है, तो फिर इससे अलग मत करना। अब इस संसार रूपी कीचड़ में लोटने के लिए मेरा त्याग मत करो। यह प्रार्थना करते हुए एक दिव्य प्रकाश के बीच उनकी देह लवंगी सहित गंगा में विसर्जित हो गयी।

गंगा की स्तुति में रचे गये उनके ये पद 'गंगा लहरी' में संकलित हैं। ऐसा कहते हैं कि कांसे के पात्र में गंगाजल भरकर यदि गंगालहरी का मनपूर्वक पाठ किया जाए, तो आज भी उस जल में लहरें उठने लगती हैं। इसके अतिरिक्त ग्रंथ भामिनी विलास, सुधा लहरी, अमृत लहरी, पीयूष लहरी, करुणा लहरी आदि उनकी अन्य प्रसिद्ध कृतियां हैं।

तीर्थरक्षक महाराजा जयसिंह

हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक में प्रति 12 वर्ष बाद कुंभ मेले लगते हैं, जिनमें करोड़ों हिन्दू आकर पुण्य स्नान करते हैं। 1925–26 की बात है। हरिद्वार के कुंभ में भारत के अनेक राजा दल, बल और परिवार सहित स्नान करने आये। इस अवसर का लाभ उठाने के लिए तत्कालीन वायसराय भी हरिद्वार आ गये।

श्रद्धालुओं की भीड़ के कारण नगर में गंदगी चरम पर थी। अंग्रेजों ने हरिद्वार की सफाई के नाम पर एक बड़ा नाला शहर में से निकालने की योजना बनाई,

जिसमें शहर की समस्त नालियां आकर मिलतीं और जो हर की पैड़ी पर आकर गंगा में गिरता। इस प्रकार सफाई के नाम पर वे गंगा एवं हर की पैड़ी को ही अपवित्र करना चाहते थे। कुटिल अंग्रेजों ने उसका नक्शा भी बना लिया।

उन दिनों अंग्रेज समर्थक राजाओं ने 'नरेन्द्र मंडल' नामक संगठन बना रखा था। इसका गठन 1921 में ब्रिटिश शासन को बल प्रदान करने के लिए ही हुआ था।

अलवर नरेश महाराजा जयसिंह से नहीं रहा गया। वे क्रोध में आकर खड़े हो गये। उन्होंने अपनी कटार म्यान से निकाली और उस नक्शे पर फेंक दी। कटार वहीं जा धंसी, जहां हर की पैड़ी पर नाला डालने की योजना अंग्रेज बना रहे थे। वह नक्शा वहां से ही फट गया। राजा जयसिंह ने गुस्से में कहा – जब तक जयसिंह जीवित है, तब तक गंदा नाला हर की पैड़ी पर नहीं गिरेगा।

वायसराय ने हरिद्वार में नरेन्द्र मंडल के सब राजाओं के सम्मुख एक बड़ी मेज पर वह नक्शा फैला दिया। उन्होंने अपनी बात इस प्रकार रखी कि सब राजा मौन हो गये। यद्यपि सब यह समझ रहे थे कि तीर्थ को अपवित्र करने की ही यह योजना है; पर पहले बोलकर अंग्रेजों की आंख में किरकिरी बनने को कोई तैयार नहीं था।

सबका मौन देखकर ऐसा लगा कि इस योजना को स्वीकृति मिल ही जाएगी; पर अलवर नरेश महाराजा जयसिंह से नहीं रहा गया। वे क्रोध में आकर खड़े हो गये। उन्होंने अपनी कटार म्यान से निकाली और उस नक्शे पर फेंक दी। कटार वहीं जा धंसी, जहां हर की पैड़ी पर नाला डालने की योजना अंग्रेज बना रहे थे। वह नक्शा वहां से ही फट गया। राजा जयसिंह ने गुस्से में कहा – जब तक जयसिंह जीवित है, तब तक गंदा नाला हर की पैड़ी पर नहीं गिरेगा।

यह कहकर वे सभा छोड़कर चले गये। यह देखकर अन्य राजा भी उठ गये। इस प्रकार उनके साहस से गंगा को

अपवित्र करने का ब्रिटिश षड्यन्त्र विफल हो गया।

स्वामी रामसुखदास

स्वामी रामसुख दास कलियुग के महान विरक्त संन्यासी थे। ऐसा व्यक्ति आज के युग में मिलना दुर्लभ है, जिसने जीवन में अपना चित्र कभी न खिंचवाया हो। उनकी कथाएं होती थीं; पर उसमें कठोर निर्देश था कि कोई उनका चित्र नहीं खींचेगा। उनके रिकार्ड किये हुए प्रवचन आज भी दूरदर्शन पर आते हैं; पर उनमें भी उनकी केवल आवाज होती है, चित्र नहीं। इतना ही नहीं, उन्होंने अपने लिए आश्रम तो दूर, कोई कुटिया तक नहीं बनाई। कभी बैंक में खाता नहीं खोला। उनका मानना था कि संन्यासी को इन चीजों से मुक्त रहना चाहिए।

ऋषिकेश के पास गीता आश्रम में वे प्रायः आकर रहते थे। उनके भक्तजनों की संख्या अगणित थी। वे लम्बे समय तक गीता प्रेस गोरखपुर की पत्रिका 'कल्याण' के सम्पादक रहे। आगे चलकर भक्तों के आग्रह पर स्वामी जी ने पूरे देश का भ्रमणकर गीता पर प्रवचन देने प्रारम्भ किये। वे अपने प्रवचनों में कहते थे कि भारत की पहचान गाय, गंगा, गीता, गोपाल तथा गायत्री से है। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद जब–जब शासन ने हिन्दू कोड बिल और धर्मनिरपेक्षता की आड़ में हिन्दू धर्म तथा संस्कृति पर चोट करने का प्रयास किया, तो उन्होंने डटकर शासन की उस दुर्नीति का विरोध किया।

स्वामी जी की कथनी तथा करनी में कोई भेद नहीं था। सन्त जीवन स्वीकार करने के बाद उन्होंने जीवन भर पैसे तथा स्त्री को स्पर्श नहीं किया। स्वामी जी ने अपनी कथाओं में कभी पैसे नहीं चढ़ने दिये। उन्होंने किसी पुरुष या महिला को

अपना शिष्य भी नहीं बनाया। यदि कोई उनसे शिष्य बना लेने की प्रार्थना करता था, तो वे 'कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम' कहकर उसे टाल देते थे।

तीन जुलाई, 2005 (आषाढ़ कृष्ण 11) को ऋषिकेश में 103 वर्ष की परिपूर्ण आयु में उन्होंने अपना शरीर छोड़ा। उनकी इच्छानुसार देहावसान के बाद गंगा के तट पर दो चिताएं बनायी गयीं। एक में उनके शरीर तथा दूसरी पर उनके वस्त्र, माला, पूजा सामग्री आदि का दाह संस्कार हुआ। इस प्रकार परम वीतरागी सन्त रामुसखदास जी ने देहान्त के बाद भी अपना कोई अवशेष नहीं छोड़ा, जिससे कोई उनका स्मारक न बना सके। चिताओं की अग्नि शान्त होने पर अचानक गंगा की एक विशाल लहर आयी और वह समस्त अवशेषों को अपने साथ बहाकर ले गयी। इस प्रकार मां गंगा ने अपने प्रेमी पुत्र को अपनी बाहों में समेट लिया।

एक बार संत रविदास का एक भक्त उनके पास रोता हुआ आया। उसका सोने का एक कड़ा स्नान करते समय गंगा जी में गिर गया। संत जी ने उसे धैर्य बंधाते हुए चमड़ा भिगोने वाली अपनी कठौती में से वह कड़ा निकाल दिया। जब भक्त ने आश्चर्य व्यक्त किया, तो उन्होंने बस इतना ही कहा – मन चंगा, तो कठौती में गंगा।

संत रविदास : मन चंगा तो कठौती में गंगा

काशी निवासी संत रविदास की चर्चा भी यहां भी सुनी होगी। वे जूते–चप्पल बनाने के अपने काम को ही पूजा भाव से करते थे। एक बार उनका एक भक्त उनके पास रोता हुआ आया। उसका सोने का एक कड़ा स्नान करते समय गंगा जी में गिर गया। संत जी ने उसे धैर्य बंधाते हुए चमड़ा भिगोने वाली अपनी कठौती में से वह कड़ा निकाल दिया। जब भक्त ने आश्चर्य व्यक्त किया, तो उन्होंने बस इतना ही कहा – मन चंगा, तो कठौती में

गंगा।

टिहरी नरेश मेदिनी शाह

अब तो राजशाही समाप्त हो गयी; पर जब इनका अस्तित्व था, तो टिहरी के राजा को 'बुलांदा बदरी' (बोलता बदरीनाथ) कहा जाता था। बदरीनाथ के कपाट खुलने की तिथि वे ही घोषित करते थे। उस समय वे पूरे गढ़वाल के शासक हुआ करते थे। बाद में अंग्रेजों ने गढ़वाल को दो भाग कर एक भाग ब्रिटिश गढ़वाल के नाम से अपने अधीन कर लिया। आज का उत्तरकाशी जिला गढ़वाल में ही है। इसमें ही गंगा, यमुना और सरस्वती जैसी तीन पवित्रतम नदियों का मायका है। इसलिए टिहरी नरेश स्वयं को गंगापुत्र मानते थे।

इस नाते से हरिद्वार के कुंभ में गंगा के सबसे निकट टिहरी नरेश अपना डेरा लगाते थे। देश भर के अन्य राजा भी उनके इस अधिकार को मान्यता देते थे। एक बार 48 वें टिहरी नरेश मेदिनी शाह (1676–1699) को डेरा लगाने में कुछ विलम्ब हो गया, तब तक कुछ अन्य नरेशों में गंगा के निकट अपने डेरे–तम्बू लगा दिये। जब टिहरी नरेश ने इस पर आपत्ति की, तो सबने कहा कि जैसे गंगा आपकी मां हैं, वैसे ही वे हमारी भी मां हैं। उन पर हमारा भी उतना ही हक है, जितना आपका। इसलिए आप इस बार अपना डेरा किसी और जगह लगा लें।

मेदिनी शाह ने केवल इतना ही कहा – यदि गंगा सचमुच मेरी मां हैं, तो फिर वे स्वयं ही मेरे पास आ जाएंगी। यह कहकर उन्होंने काफी दूरी पर डेरा डाल दिया; पर सभी राजाओं के आश्चर्य की सीमा न रही, जब उन्होंने देखा कि कुंभ के स्नान से पूर्व ही गंगा ने अपना मार्ग बदल लिया और टिहरी नरेश के डेरे के निकट पहुंच गयी। सब राजाओं ने टिहरी नरेश से जाकर क्षमा मांगी।

पर इससे टिहरी नरेश को अहंकार हो गया। जब सब राजा उनकी कुटिया के बाहर क्षमाभाव से खड़े थे, तब राजा बाहर नहीं निकले। बहुत याचना करने पर राजा ने अपने पैर का अंगूठा बाहर निकाला और कहा, आपने मेरा अपमान किया है, इसलिए आप केवल इस अंगूठे के दर्शन के अधिकारी हैं। सब राजा उस अंगूठे को ही स्पर्श कर लौट गये। कालांतर में पैर के उसी अंगूठे पर कुष्ठ का एक सफेद दाग आ गया। ऐसा कहा जाता है कि तब से टिहरी राजवंश के हर सदस्य के शरीर पर कहीं न कहीं एक सफेद दाग अवश्य होता है। इस प्रकार मां गंगा ने अपने पुत्र के सम्मान की तो रक्षा की; पर उसके अहंकार का दंड भी दिया।

गंगापुत्र भीष्म पितामह की इच्छा और उनके बाणों की मार से गंगा अपना प्रवाह बदल लेती थी, यह सबने सुना ही है; पर ऐसे अन्य प्रसंग भी हैं। उत्तराखंड के देहरादून जिले में विकासनगर के पास एक 'बावड़ी' है। कहते हैं इन्द्र और अहल्या वाला प्रसंग वहीं हुआ था। जब गौतम ऋषि मुर्गे की बांग सुनकर गंगास्नान को हरिद्वार गये, तो गंगा ने प्रकट होकर उन्हें तुरंत लौटने को कहा, और इसके बाद गंगा मां उस आश्रम के पास एक कुंड में प्रकट हो गयीं।

मसूरी से यमुनोत्री जाते समय लाखामंडल (लाक्षागृह) के निकट एक स्थान पर गंगा प्रकट होती हैं। माँ कुंती की इच्छा पर अर्जुन ने बाण मारकर यहां गंगा को प्रकट किया था, इसलिए उसे 'अर्जुन गंगा' भी कहते हैं। यमुनोत्री के मार्ग में गंगनानी नामक गांव में भी एक कुंड में भी गंगाजल आता है। कहते हैं कि ऋषि जमदग्नि वहां रहते थे तथा प्रतिदिन गंगास्नान करने जाते थे। जब वे बहुत वृद्ध हो गये, तो उनके आग्रह पर गंगा उस कुंड में प्रकट हो गयीं। इन तीनों स्थानों के जल की जांच में वह गंगाजल ही निकला। ये तीनों स्थान बिल्कुल यमुना के निकट हैं। यह मां गंगा का अपनी संतानों के प्रति असीम प्रेम का परिचायक है। ❑

कैसे बने गंगा स्वच्छ

प्रदूषण रोकने के लिए जो भारतीय कुंभ परंपरा में निर्धारित सिद्धांत था, उसकी पालन हो। उसमें लिखा है कि हमारे शरीर के मैल से या गंगा को किसी प्रकार से मैली करने वालों को गंगा में स्नान का हक नहीं है। आज के उद्योगों और अन्य प्रकार के मैले डालने वालों को कठोर सजा का प्रावधान क्रियान्वित किया जाए।

■ राजेन्द्र सिंह

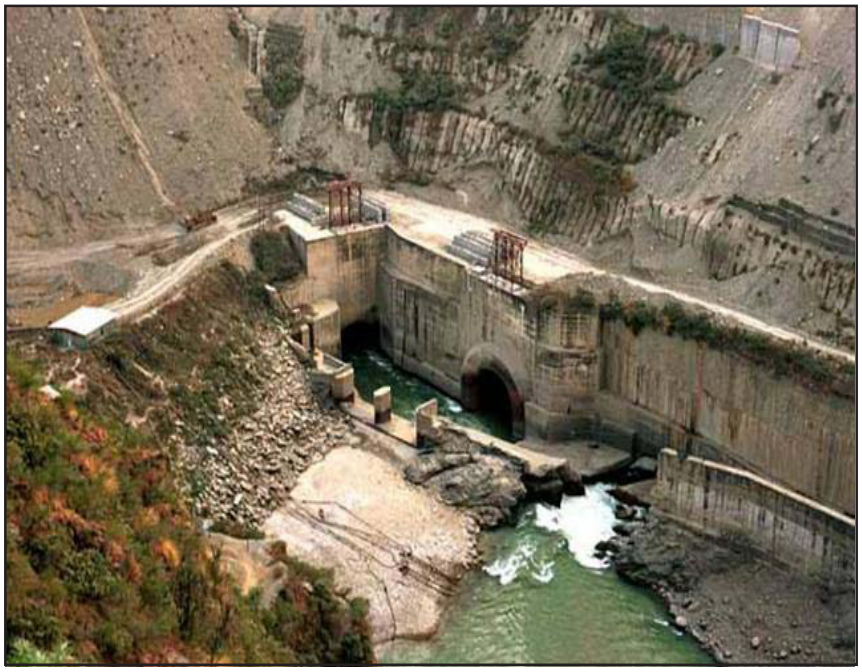

उत्तराखंड सरकार ने गंगा को जगह–जगह बांधने के लिए 268 परियोजनाएं गंगा की सभी जलधाराओं पर बनाने की योजना प्रस्तुत की हुई है। इन योजनाओं की जानकारी लेने मैं खुद देहरादून पहुंचा और देखा कि पहले से ही इनके विरुद्ध एक जोरदार आवाज उत्तराखंड के पहाड़ों से खड़ी हुई थी. . .

गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित होने के बाद भी संकट बरकरार है। 4 नवंबर, 2008 को जब गंगा राष्ट्रीय नदी घोषित हुई तो पूरे देश में खुशी की लहर दौड़ी। मई, 2009 में उन्हीं नेताओं को भारत सरकार चलाने का मौका पूरे राष्ट्र की जनता ने दोबारा दिया। सरकार बनने के बाद फिर राष्ट्रीय नदी गंगा घाटी प्राधिकरण बना। इससे भी एक नई आशा जगी थी। आप जानते होंगे कि पिछले कई वर्षों से गंगा से जुड़ी जल विद्युत परियोजना विरोधी आंदोलन चल रहे हैं, लेकिन गंगा पर बांध बनने का काम रुका नहीं।

उत्तराखंड सरकार ने गंगा को जगह–जगह बांधने के लिए 268 परियोजनाएं गंगा की सभी जलधाराओं पर बनाने की योजना प्रस्तुत की हुई है। इन योजनाओं की जानकारी लेने मैं खुद देहरादून पहुंचा और देखा कि पहले से ही इनके विरुद्ध एक जोरदार आवाज उत्तराखंड के पहाड़ों से खड़ी हुई थी, राधा बहन भट्ट, रवि चोपड़ा, शमशेर सिंह बिष्ट जैसे अनेक साथियों ने विविध रूपों में नदियों को बचाने के समाज के संकल्प को दिशा दी है। मैं खुद भी सरयू, मंदाकिनी, भगीरथी, भिलांगना, राम गंगा, कोसी नदी और छोटी–छोटी अनेकों जल धाराओं पर उत्तराखंड के सैकड़ों साथियों के साथ बैठा और नदियों के बेसमझी के बंधन को तोड़ने की कोशिश शुरू हुई।

इसी दौरान भिलांगना नदी के साथियों को कई बार उत्तराखंड पुलिस ने जेल में बंद किया, तब भी आंदोलन रुका नहीं। उत्तराखंड में नदी बचाओ आंदोलन तेज ही गया है। 2005 में लुहारी नाग पाला परियोजना की सुगबुगाहट शुरू हुई और हमने भटवाड़ी में आस–पास के गांवों में जाकर साथियों से बातचीत शुरू की, लेकिन पहाड़ का आंदोलन पहाड़ के लोगों की अपनी मेहनत व समझ से ही हुआ है। यह आंदोलन और लुहारी

नागपाला परियोजना का काम भी शुरू हुआ। हमने कई बार जाकर पाला गांव में और लुहारी गांव में बैठकें आयोजित की, लेकिन पहाड़ में बांधों को रोकने का वैसा उत्साह दिखाई नहीं दिया।

धीरे–धीरे लोगों को इस बांध का स्वरूप समझ में आया और बड़ी–बड़ी सुरंग बनने लगी तो लोगों ने इस परियोजना का घोर विरोध किया। लोगों के विरोध से योजना का काम कभी दो दिन कभी 10 दिन रुक जाता था। अंततः प्रो. जीडी अग्रवाल जी आमरण अनशन पर बैठ गए और एक गहरी आवाज बने। इसके साथ धीरे–धीरे और लोग जुड़ने लगे। कुछ महत्वपूर्ण लोग भी इस आंदोलन में शामिल हुए और एक सरकारी समिति बनी। उस समिति में मैं भी एक सदस्य बना। उच्च विशेषज्ञ समिति में मैं यह बात कहता रहा कि गोमुख से उत्तरकाशी तक गंगा निर्विघ्न, पवित्र प्रवाहित होती रहे। उसमें किसी भी तरह का कोई भी निर्माण कार्य न किया जाए।

जब तकनीकी मुद्दों पर बातें होने लगी और फिर हमने गंगा के पर्यावरणीय प्रवाह को ध्यान में रखकर लुहारी नागपाला में 16 क्यूमेक्स जल प्रवाह की बात कही, क्योंकि इस नदी में वहां इतना ही तीन

सीजन में जल प्रबंध होता है। यह जल प्रवाह हमें मिल जाएगा तो फिर बांध नहीं बनेगा। गंगा ए–क्लास नदी है। ए–क्लास नदी के 17 बिंदुओं वाले सिद्धांत को सामने रखकर यह मांग की थी।

अच्छा है यह मांग स्वीकार हो गई, लेकिन बांध कंपनी के ठेकेदार की ईमानदारी पर यह निर्भर करेगा कि इसका क्रियान्वयन हो। बांध नहीं बनें, यही सही होगा। अंततः यह बात भारत सरकार के ऊर्जा मंत्रालय ने स्वीकार कर ली, लेकिन बांध का काम जारी रहा। फिर 2009 में मकर संक्रांति के समय जीडी अग्रवाल जी पुनः आमरण अनशन पर बैठे और भारत सरकार ने गंगा पर नए बांध नहीं बनाने तथा लुहारी नागपाला परियोजना का काम बंद करने का निर्णय लिया।

हाईकोर्ट ने भी लुहारी नागपाला के काम का फैसला राष्ट्रीय नदी गंगा घाटी प्राधिकरण पर डाल दिया। फिर गंगा घाटी प्राधिकरण में गैर–सरकारी सदस्यों ने एक मत होकर लुहारी नागपाला परियोजना का काम रोकने की सर्वसम्मति से सिफारिश की। अंत में दो महीनों के

हाईकोर्ट ने भी लुहारी नागपाला के काम का फैसला राष्ट्रीय नदी गंगा घाटी प्राधिकरण पर डाल दिया। फिर गंगा घाटी प्राधिकरण में गैर–सरकारी सदस्यों ने एक मत होकर लुहारी नागपाला परियोजना का काम रोकने की सर्वसम्मति से सिफारिश की। अंत में दो महीनों के अंदर दोनों पक्षों को सुनकर निर्णय करने का सर्वसम्मत प्रस्ताव पारित हुआ। अभी ऊर्जा और पर्यावरण मंत्रालय ने रिपोर्ट बनाकर प्रधानमंत्री को सौंपी है।

अंदर दोनों पक्षों को सुनकर निर्णय करने का सर्वसम्मत प्रस्ताव पारित हुआ। अभी ऊर्जा और पर्यावरण मंत्रालय ने रिपोर्ट बनाकर प्रधानमंत्री को सौंपी है। अब इस पर राष्ट्रीय नदी गंगा घाटी प्राधिकरण को अंतिम फैसला करना है। सरकारी पक्ष की रपट तो प्रधानमंत्री जी के पास है, लेकिन गैर–सरकारी पक्ष को सुनकर भी प्रधानमंत्री जी को रपट प्रस्तुत करना अच्छा होगा।

पर्यावरण मंत्रालय ने 30 नवंबर को गैर–सरकारी सदस्यों को बुलाया था और उस दिन सभी गैर सरकारी सदस्यों ने एक मत होकर लुहारी नागपाला परियोजना को सर्वसम्मति से बंद करने की बात कही थी। इस विषय में अब प्रधानमंत्री जी को मुख्य निर्णय करना है। हमें पूरी उम्मीद है कि हमारे प्रधानमंत्री और गंगा घाटी प्राधिकरण के अध्यक्ष लुहारी नागपाला परियोजना को स्थाई रूप से रोक देंगे। मैं गंगा घाटी प्राधिकरण के सभी गैर सरकारी सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि गंगा घाटी में बांधों का बनना उचित नहीं है। अब आपके ऊपर ही गंगा का भविष्य निर्भर है। गंगा आंदोलन की दोनों मांगों को भारत सरकार ने सिद्धांततः स्वीकार लिया है। गंगा पर बांध नहीं बनने चाहिए, लेकिन मेरा मानना है कि भागीरथी पर अब कोई भी बांध निर्माण न हो।

उत्तरकाशी तक गंगा नैसर्गिक रूप में प्रवाहित हो। लुहारी नागपाला का काम सदैव रुका रहे है। गंगा की मुख्य धारा ही नहीं, उसकी सभी सहायक नदियों पर भी ऐसी परियोजनाएं नहीं बननी चाहिए। गंगा की पवित्रता और शुद्ध–सदानीरापन बनाने के लिए राज, समाज और संतों की साझी जिम्मेदारी है। राज का काम है गंगा की पवित्रता के लिए नीति–नियम और कानून–कायदे बनाना तथा उनकी पालना

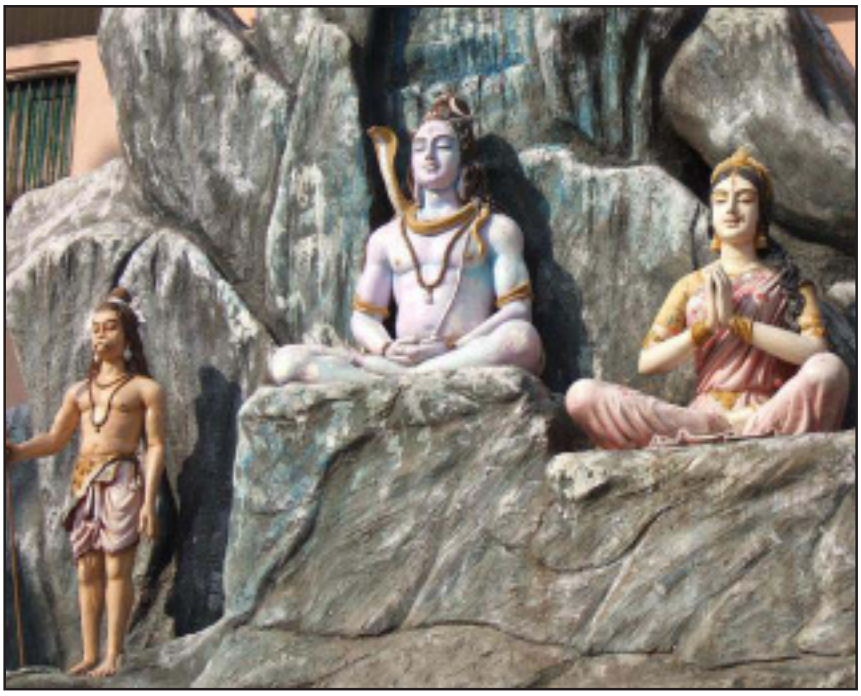

करवाना। समाज का काम है, गंगा को हम मां कहते हैं तो उसके साथ मां जैसा व्यवहार करना। हम इसमें अपना किसी भी तरह का मैला और गंदगी न जाने दें। गंगा में मैला डालने वाले उद्योगों और नालों को गंगा से हटाया जाए। संतों की भूमिका है कि वे अपने स्थानों से समाज और राज को गंगा की पवित्रता के लिए प्रयत्न करने का प्रोत्साहन दें। राज और समाज लालची बनकर गंगा को मैला करें तो उन्हें रोकें और यदि कानून का पालना न हो तो कानून की पालना कराएं।

मैं गंगा घाटी प्राधिकरण के सभी गैर सरकारी सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि गंगा घाटी में बांधों का बनना उचित नहीं है। अब आपके ऊपर ही गंगा का भविष्य निर्भर है। गंगा आंदोलन की दोनों मांगों को भारत सरकार ने सिद्धांततः स्वीकार लिया है।

संत सृष्टि के संरक्षक होते हैं, राज साझी संपत्ति का संरक्षणकर्ता, राष्ट्र का निर्माता और संचालनकर्ता होता है। समाज तो अपनी ही संपत्ति उपयोग करता है। इसलिए तीनों की भूमिकाएं अलग–अलग हैं। जब समाज लालची होकर केवल साझी संपदा का शोषण करने लग जाता है और राज्य कर्मचारी, अधिकारी और नेता भी बड़े लालची बनकर समाज के लालच को बढ़ाकर अपनी स्वार्थ सिद्धि में जुट जाते हैं, तब ही साझी मां गंगा में सारे गंदे नाले आकर मिल जाते हैं।

ऐसे में हमें समझना होगा कि आज गंगा को गंदी करने की सबसे बड़ी चुनौती कौन है? उक्त भूमिका से स्पष्ट होता है कि सरकार ही गंगा को गंदी करवा रही है। इसलिए सरकार को अपने अंदर की गंदगी को गंगा की गंदगी से पहले ठीक करना होगा, तभी गंगा को शुद्ध करने की

योजना सफल होगी। गंगा शुद्धता का प्रतीक है। यह शुद्ध मन से शुद्धता का काम करने पर ही शुद्ध बनेगी। 5 अक्टूबर को उत्तराखंड के मुख्यमंत्री ने गंगा को मां कहकर मां जैसा व्यवहार करने का संकल्प दोहराया और गंगा में खनन शुरू करवा दिया।

ऐसे कथनी करनी के फेर से गंगा शुद्ध नहीं हो सकती। गंगा योजना शुद्धता से बनाकर शुद्धतापूर्ण गंगा का कार्यकारी ढांचा बनाना पड़ेगा। गंगा का काम करने

वाला ढांचा ठीक करना अत्यंत आवश्यक है। राज्य को अपनी नदी को मानवीय शरीर की नाड़ी इसकी रक्षा–सुरक्षा की पूर्ण जिम्मेदारी लेनी है। भारत सरकार ने इस दिशा में पहली पहल ठीक कर दी है। गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करके, दूसरा कदम यानी राष्ट्रीय गंगा घाटी अभिकरण का निर्माण भी ठीक है। इस अभिकरण में सरकारी और गैर–सरकारी सदस्यों की संख्या बराबर हो तो अच्छा होगा, लेकिन अब अगला कदम उठाने की जो जरूरत है, उसमें सरकार कोताही बरत रही है। सबसे पहले गंगा पर बन रहे बांधों का निर्माण रोकना है। पुराने बांधों पर पर्यावरणीय प्रवाह सुनिश्चित करके गंगा को पर्यावरणीय प्रवाह प्रदान करना। गंदे नालों को ट्रीटमेंट करने के बाद भी किसी कीमत पर वह पानी गंगा में न छोड़ा जाए।

गंगा के सभी गंदे नालों के उपचार के बाद वह पानी खेती और बागवानी में उपयोग किया जाए। उक्त सारे काम समाज को तैयार करके समाज की समझ और सहभागी निर्णय से ही संपादित हों। गंगा की शुद्धता के लिए समाज में शुद्धता का भाव बनाने और गंगा की स्वच्छता, पवित्रता के लिए पूरी गंगा घाटी के सभी छोटे–छोटे गांवों, विद्यालयों, महाविद्यालयों, नगरों, महानगरों में समाज के साथ संवाद करके उनका शिक्षा–प्रशिक्षण करके उनकी क्षमताओं और कुशलताओं का विकास करके ही इस कार्य में निरंतरता बनी रहेगी।

पुराने बांधों पर पर्यावरणीय प्रवाह सुनिश्चित करके गंगा को पर्यावरणीय प्रवाह प्रदान करना। गंदे नालों को ट्रीटमेंट करने के बाद भी किसी कीमत पर वह पानी गंगा में न छोड़ा जाए।

आज हमें महात्मा गांधी की बहुत याद आती है। जब भी कोइ राष्ट्र या गांव का काम हमारे सामने है तो गांधी जी का बताया रास्ता सूत्र और मंत्र की तरह काम आता है। हमें गगा की पवित्रता को पुनः जीवित करने के लिए महात्मा गांधी के बताए रास्ते को ही अपनाना होगा। हम गंगा पर हो रहे, अतिक्रमण, प्रदूषण और शोषण को रोकने के लिए, समग्रता से संपूर्ण गंगा जलागम हेतु गंगा की विविधता का सम्मान करते हुए कानून बनाएं। पहले तो गंगा में हो रहे गलत कामों को रोकने की सद्इच्छा भारत सरकार की हो। फिर राज्य सरकारों को गंगा नदी के राष्ट्रीय अस्तित्व को कायम करने वाली बाध्यता बने। इसी प्रकार प्रत्येक महानगर, पालिका, नगरपालिका, ग्राम पंचायत और ग्राम सभायें सभी मिलकर गंगा का प्रवाह क्षेत्र, बाढ़ क्षेत्र की पहचान करके समाज को बताएं और अति बाढ़ क्षेत्र के लिए कानून बनाकर उसका पालन सुनिश्चित करें।

प्रदूषण रोकने के लिए जो भारतीय कुंभ परंपरा में निर्धारित सिद्धांत था, उसकी पालन हो। उसमें लिखा है कि हमारे शरीर के मैल से या गंगा को किसी प्रकार से मैली करने वालों को गंगा में स्नान का हक नहीं है। आज के उद्योगों और अन्य प्रकार के मैले डालने वालों को कठोर सजा का प्रावधान क्रियान्वित किया जाए। गंगा को मैला कराने वाले अधिकारियों को सजा–ए–मौत दी जाए और गंगा की पवित्रता बनाए रखने की कोशिशों को संरक्षण, सम्मानित और प्रोत्साहित किया जाए। ❑

किस हाल में है देश का स्वास्थ्य ढांचा

बीबीसी के एक सर्वे के मुताबिक पूरे आस्ट्रेलिया में भारतीय मूल के 2,143 डाक्टर और ब्रिटेन में भारतीय डाक्टरों की संख्या 4,664 है। इसके अलावा दक्षिण अफ्रीका, कैरेबियाई द्वीप समूह, दुबई समेत तमाम अरब देशों के अलावा भारतीय डाक्टर मलेशिया और इंडोनेशिया में भी काम कर रहे हैं और वहां के लोगों को स्वास्थ्य लाभ दिला रहे हैं। इसी साल जारी योजना आयोग की एक रिपोर्ट के मुताबिक वर्ष 2004 में अमेरिका और ब्रिटेन में काम कर रहे डाक्टरों में 4.9 प्रतिशत भारतीय मूल के थे।

अपने देश के लिए इससे बड़ी बिडंबना और क्या होगी कि दुनिया में सबसे ज्यादा डाक्टर अपने ही देश से पढ़कर निकलते हैं। इसके बावजूद देश डाक्टरों की भयंकर कमी से जूझ रहा है। आम चुनावों से ठीक पहले तक स्वास्थ्य मंत्री अंबुमणि रामदौस ने खुद स्वीकार किया था कि देश को अब भी कम से कम करीब सात लाख डाक्टरों की जरूरत है।

■ **उमेश चतुर्वेदी**

अपने देश के लिए इससे बड़ी बिडंबना और क्या होगी कि दुनिया में सबसे ज्यादा डाक्टर अपने ही देश से पढ़कर निकलते हैं। इसके बावजूद देश डाक्टरों की भयंकर कमी से जूझ रहा है। आम चुनावों से ठीक पहले तक स्वास्थ्य मंत्री अंबुमणि रामदौस ने खुद स्वीकार किया था कि देश को अब भी कम से कम करीब सात लाख डाक्टरों की जरूरत है। अंबुमणि रामदौस के मुताबिक इन दिनों देश में तकरीबन सात लाख प्रशिक्षित डाक्टर या तो प्रैक्टिस कर रहे हैं या फिर सरकारी या गैर–सरकारी अस्पतालों में नौकरियां कर रहे हैं, लेकिन एक सौ बीस करोड़ की आबादी के लिए डाक्टरों की यह संख्या ऊंट के मुंह में जीरे के समान नजर आ रही है। इसके साथ ही देश को करीब दो लाख डेंटिस्टों की कमी से भी जूझना पड़ रहा है।

इन दिनों देश में तकरीबन 73 हजार डेंटल सर्जन रजिस्टर्ड हैं, जबकि जरूरत करीब तीन लाख की है। आर्थिक महाशक्ति की राह पर आगे बढ़ने का दावा कर रही मनमोहन सिंह की केंद्र सरकार के ही एक और सहयोगी मोंटेक सिंह अहलूवालिया की अगुआई वाला योजना आयोग भी मानता है कि देश को अब भी करीब छह

लाख डाक्टरों की जरूरत है। डाक्टरों की कमी से जूझ रहा देश नर्सों और दूसरी तरह के प्रशिक्षित पैरामेडिकल कर्मचारियों की कमी का भी सामना कर रहा है।

योजना आयोग के वर्ष 2007 के आंकड़े के मुताबिक देश में करीब ग्यारह लाख नर्से और करीब इतने ही पैरामेडिकल कर्मचारी काम कर रहे हैं, लेकिन अपनी भारी–भरकम जनसंख्या के लिहाज से यह संख्या भी बेहद कम है। योजना आयोग के मुताबिक देश के स्वास्थ्य को पटरी पर लाने के लिए तब करीब दस लाख नर्सों और इतने ही पैरामेडिकल स्टाफ की जरूरत थी।

आज हमारी देश की जनसंख्या थमने का नाम ही नहीं ले रही है। जाहिर है, मौजूदा समय में इस जरूरत में इजाफा ही हुआ होगा। मजे की बात यह है कि हर साल देश के फार्मा और नर्सिंग कालेजों से करीब तीस हजार की संख्या में छात्र ट्रेनिंग लेकर निकलते हैं। इसके बावजूद इनकी कमी है कि जस की तस बनी हुई है। यहां यह भी ध्यान देना चाहिए कि विकसित देशों में जहां दस हजार की आबादी पर 33 नर्से हैं, वहीं भारत में यह संख्या महज आठ ही है।

दरअसल, भारत की आबादी करीब 1.5 फीसदी की रफ्तार से बढ़ रही है यानी हर साल करीब 1.5 करोड़ लोग आबादी का हिस्सा बन जाते हैं, लेकिन यहां डाक्टरों की भारी कमी के साथ–साथ नए डाक्टर बनने की रफ्तार बेहद कम है। जहां 1.5 करोड़ लोग बढ़ रहे हैं, वहीं हर साल सिर्फ 30 हजार छात्र ही एमबीबीएस की डिग्री लेकर कालेजों से निकल रहे हैं।

अंबुमणि रामदौस के मुताबिक उनमें से ही करीब पांच फीसदी यानी पंद्रह सौ को विदेशी कमाई का मोह हमसे सात

आज हमारी देश की जनसंख्या थमने का नाम ही नहीं ले रही है। जाहिर है, मौजूदा समय में इस जरूरत में इजाफा ही हुआ होगा। मजे की बात यह है कि हर साल देश के फार्मा और नर्सिंग कालेजों से करीब तीस हजार की संख्या में छात्र ट्रेनिंग लेकर निकलते हैं। इसके बावजूद इनकी कमी है कि जस की तस बनी हुई है।

समंदर पार लेकर चला जाता है। इसी तरह हर साल करीब 12 हजार पोस्ट ग्रेजुएट डाक्टर एम्स जैसे तमाम संस्थानों से डाक्टरी की ऊंची पढ़ाई करके निकलते हैं, जबकि जरूरत 30 हजार सालाना की है। उनमें से भी करीब पांच फीसदी विदेशी लोगों के इलाज के लिए हर साल उड़ जाते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के मुताबिक डाक्टर और जनसंख्या के अनुपात के लिहाज से भारत की स्थिति अफ्रीका महाद्वीप के सहारा रीजन के तकरीबन बराबर है।

इस रिपोर्ट के मुताबिक भारत में दस हजार लोगों पर जहां करीब 5.9 डाक्टर हैं, वहीं आस्ट्रेलिया में यह संख्या 249, कनाडा में 209 और ब्रिटेन में 166 है। प्रति दस हजार जनसंख्या पर डाक्टरों की सबसे ज्यादा संख्या अमेरिका में यानी करीब 548 है। अमेरिकी अनुपात को छोड़ भी दें तो अंदाजा लगाना आसान है कि भारत की हालत क्या है। यह तो हुई फिजिकल हेल्थ की बात। आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण ने पूरी दुनिया को एक रोग का उपहार बड़ी तेजी से दिया है। यह उपहार है अवसाद यानी डिप्रेशन और तनाव। इसके चलते पूरी दुनिया में तेजी से मानसिक रोगियों की संख्या बढ़ती जा रही है।

राजधानी दिल्ली के जीबी पंत अस्पताल के मनोरोग विभाग के प्रमुख

आरसी जिलोहा के मुताबिक इस समय अपने देश में तकरीबन दो करोड़ लोग मानसिक बीमारियों से ग्रस्त हैं। उनका इलाज करने वाले डाक्टरों की संख्या महज साढ़े तीन हजार ही है, जबकि उनकी सेवा के लिए खासतौर पर प्रशिक्षित नर्सों की भी जरूरत होती है। हैरत की बात यह है कि मानसिक रोगियों के लिए खासतौर पर प्रशिक्षित नर्सों की संख्या महज डेढ़ हजार ही है। मानसिक बीमारियों का इलाज करने वाले डाक्टरों की संख्या के लिहाज से भी भारत यूरोप और अमेरिका ही नहीं, कुछ एशियाई देशों के मुकाबले भी काफी पिछड़ा हुआ है।

भारत में दस लाख आबादी पर जहां मानसिक रोगियों का इलाज करने वाले डाक्टरों की संख्या महज 0.4 है, वहीं अपने पड़ोसी नन्हें से देश मालदीव में यह संख्या 3 है। श्रीलंका में यह संख्या 18 है। योजना आयोग के मुताबिक हर साल पढ़ाई पूरी करने वाले करीब पांच फीसदी डाक्टर और नर्से विदेशी धरती का रुख कर लेते हैं। स्वास्थ्य मंत्री रहते खुद अंबुमणि रामदौस ने माना था कि भारतीय मूल के करीब साठ हजार डाक्टर अकेले अंग्रेजी बोलने वाले चार देशों अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, कनाडा और आस्ट्रेलिया में ही काम कर रहे हैं।

बीबीसी के एक सर्वे के मुताबिक पूरे आस्ट्रेलिया में भारतीय मूल के 2,143 डाक्टर और ब्रिटेन में भारतीय डाक्टरों की संख्या 4,664 है। इसके अलावा दक्षिण अफ्रीका, कैरेबियाई द्वीप समूह, दुबई समेत तमाम अरब देशों के अलावा भारतीय डाक्टर मलेशिया और इंडोनेशिया में भी काम कर रहे हैं और वहां के लोगों को स्वास्थ्य लाभ दिला रहे हैं। इसी साल जारी योजना आयोग की एक रिपोर्ट के

मुताबिक वर्ष 2004 में अमेरिका और ब्रिटेन में काम कर रहे डाक्टरों में 4.9 प्रतिशत भारतीय मूल के थे। आस्ट्रेलिया में यह संख्या 4 प्रतिशत थी, जबकि कनाडा में प्रैक्टिस कर रहे डाक्टरों में करीब 2.1 प्रतिशत भारतीय मूल के थे। इसी रिपोर्ट के मुताबिक दूसरे कई देशों को स्वास्थ्य सेवा संबंधी अन्य पेशेवर भी भारत से ही जा रहे हैं। जिनमें रेडियोलाजिस्ट, लैबोरेटरी तकनीशियन, डेंटल हाइजीनिस्ट, फिजियोथेरेपी और मेडिकल पुनर्वासकर्मी प्रमुख हैं। देश में डाक्टरों की कमी का यह हाल तब है, जबकि यहां की भारी संख्या स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों से जूझ रही है।

भारत में दस लाख आबादी पर जहां मानसिक रोगियों का इलाज करने वाले डाक्टरों की संख्या महज 0.4 है, वहीं अपने पड़ोसी नन्हें से देश मालदीव में यह संख्या 3 है। श्रीलंका में यह संख्या 18 है। योजना आयोग के मुताबिक हर साल पढ़ाई पूरी करने वाले करीब पांच फीसदी डाक्टर और नर्से विदेशी धरती का रुख कर लेते हैं।

भारतीय उद्योग जगत के प्रमुख संगठन फिक्की की एक रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया की करीब 16.5 फीसदी आबादी भारत में है, जबकि कुल बीमारियों का पांचवां हिस्सा भारत में ही पैर पसारे हुए है। जहां डाक्टरों की कमी की यह हालत है, वहां अस्पतालों और बेड की संख्या और अनुपात पर भी नजर डाल लेनी चाहिए। भारत में एक हजार की जनसंख्या के लिए अस्पतालों में 1.5 बेड ही उपलब्ध हैं, जबकि चीन और कोरिया में यह आंकड़ा 4.3 बेड का है। ये आंकड़े चिकित्सा व्यवस्था की दुर्गति की ओर इशारा करते हैं। नेशनल कमिशन आन मैक्रो इकनामिक्स एंड हेल्थ की रिपोर्ट के मुताबिक भारत की हालत बांग्लादेश और श्रीलंका से भी खराब है।

अब एक नजर देश के स्वास्थ्य पर डालना जरूरी है। अंतरराष्ट्रीय संस्था सेव

द चिल्ड्रन के मुताबिक शिशु मृत्यु दर के मामले में भारत का स्थान पांचवां हैं। यहां हर साल चार लाख शिशु पैदा होने के 24 घंटे के भीतर ही काल के गाल में समा जाते हैं। इस संस्था के मुताबिक हर साल जन्म के 24 घंटे के भीतर ही 20 लाख शिशुओं की मौत हो जाती है, जिनमें से अकेले चार लाख की संख्या सिर्फ भारत से ही है यानी हर साल एक हजार नवजात बच्चों में से जन्म लेते ही 72 की मौत हो जाती है। इसी तरह सालाना शिशु मृत्यु दर भी एक हजार में 39 है।

इतना ही नहीं उत्तर प्रदेश के गोरखपुर, देवरिया, सिद्धार्थनगर और असम में हर साल सैकड़ों बच्चे मस्तिष्क ज्वर के ही चलते मर जाते हैं। साथ ही सांस संबंधी रोग, तपेदिक, अतिसार, परजीवी बैक्टीरिया जनित बीमारियों के साथ–साथ प्रसव संबंधी समस्याओं से ग्रस्त लोगों की संख्या का एक तिहाई अकेले भारत में रहता है। इतना ही नहीं, देश की करीब 32 करोड़ महिलाएं प्रजनन संबंधी रोगों से ग्रस्त हैं। गांवों और दूर–दराज के इलाकों में रहने वाली 40 प्रतिशत महिलाओं को ल्युकोरिया, अल्सर और गर्भाशय कैंसर जैसी बीमारियों ने घेर रखा है। यह तो हुई उन आंकड़ों की बात, जिसे समय–समय पर भारत सरकार ही जारी करती है, लेकिन भारत की जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा गांवों में रहता है। यहां यह ध्यान दिया जाना जरूरी है कि डाक्टरों और रोगियों की संख्या में ही काफी उलटबांसियां हैं। ग्रामीण इलाकों में जहां रोगियों की संख्या ज्यादा है, वहीं शहरी इलाकों में डाक्टरों की संख्या ज्यादा है यानी गांवों को प्रशिक्षित डाक्टरों की जरूरत कहीं ज्यादा है। आए दिन झोलाछाप डाक्टरों का सवाल अपने यहां उठता रहता है, लेकिन गांव वाले आखिर क्या करें। उनके पास डाक्टर ही नहीं हैं तो झोलाछाप डाक्टरों से इलाज कराना मजबूरी है। जाहिर है जब तक पूरे परिप्रेक्ष्य में देश की स्वास्थ्य समस्या को देखा नहीं जाएगा। हालात में सुधार लाना आसान नहीं होगा। ❑

स्वदेशी महिला मोर्चा

आज देश के हर क्षेत्र में महिलाएं आगे आ रही है एवं सभी विषयों में महिलाएं विशेष योग्यता भी रखती हैं। महिलाओं के एकत्रीकरण मात्र से महिला सशक्तिकरण संभव नहीं है। विभिन्न विषयों जैसे– आर्थिक, कृषि, औद्योगिक क्षेत्र, इंफोरमेशन टेक्नोलॉजी (IT), सांस्कृतिक क्षेत्र, शिक्षा क्षेत्र, राजनैतिक क्षेत्र, पारिवारिक क्षेत्र, अन्य सेवा क्षेत्र, यहां तक कि रक्षा क्षेत्र में भी अब महिलाएं आगे आने लगी हैं। आज पंचायती राज में महिलाओं के लिए आरक्षण पहले से ही लागू हो चुका है। आज विधायिका में भी महिलाओं के लिए आरक्षण की बात जोर–शोर से चल रही है। आज आवश्यकता है कि विभिन्न प्रकोष्ठों, CBMD व स्वदेशी के विभिन्न आयामों से जोडा जाए अथवा महिलाओं का अलग से महिला मोर्चा बनाकर राष्ट्रीय व प्रांतीय स्तर पर संगठनात्मक पद्धति से गठन कर मंच से जोडा जाए। महिलाएं स्वदेशी के विभिन्न विषयों को अपने परिवार से प्रारंभ कर अपने मोहल्ले में, अपने शहर में, अपने प्रदेश से लेकर पूरे देश में भली–भांति रख सकती हैं। महिलाओं द्वारा या तो आंदोलन होते नहीं है और यदि होते है तो वो आंदोलन निर्णायक दौर तक पहुंचते है। कई पढ़ी–लिखी, अनुभवी महिलाएं अनेक विषय की विशेषज्ञ होते हुए भी व्यक्ति एवं समाज के दबाव में आकर अपनी प्रतिभाओं का उपयोग नहीं कर पाती। उन्हें अवसर नहीं मिल पाता। स्वदेशी जागरण मंच के माध्यम से महिलाएं आगे आ सकती है। घरों में मजदूरी करती लाखों महिलाएं देश में है। इनको संगठित करने की आवश्यकता है। इसी प्रकार शासकीय व अशासकीय क्षेत्र में लाखों महिलाएं कार्य करती है, लाखों की संख्या में गृहणी के रूप में समाज में है, मंच द्वारा सबको संगठित किया जा सकता है।

स्वदेशी जागरण मंच इलाहाबाद सम्मेलन में यह निर्णय किया गया है कि एक स्वदेशी महिला मार्चा का गठन किया जाए। महिला मोर्चा विषय पर लेख, पत्र एवं अन्य प्रकार से सुझाव श्री सरोज कुमार मित्र, अखिल भारतीय सह–संयोजक (स्वदेशी जागरण मंच) मंच के केन्द्रीय कार्यालय धर्मक्षेत्र, शिवशक्ति मंदिर, सेक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–22, को भेज सकते हैं।

बच सकता है लाखों बच्चों का जीवन

आंकड़े बताते हैं कि भारत में शिशु मृत्यु दर व बाल मृत्यु दर केवल विकसित देशों की तुलना में ही नहीं, बल्कि वियतनाम और श्रीलंका जैसे विकासशील देशों की तुलना में भी काफी अधिक है। श्रीलंका और वियतनाम में जहां शिशु मृत्यु दर प्रति एक हजार क्रमशः 12 और 16 है, वहीं भारत में यह 56 है। इसी तरह मातृ मृत्यु दर भी बहुत अधिक है।

■ **भारत डोगरा**

किसी भी देश या समाज के सार्थक विकास के लिए यह बहुत जरूरी है कि जो उद्देश्य वास्तव में पूरे समाज की भलाई से जुड़े हैं, उन्हें सबसे ऊपर की प्राथमिकता दी जाए और उन्हें प्राप्त करने के लिए समाज में व्यापक एकता स्थापित की जाए। जब सबकी भलाई से जुड़े इस तरह के उद्देश्यों के प्रति समाज में समर्पण नहीं होता है, तभी भटकाव और अनिश्चय में समाज की क्षमता बिखरने लगती है। अगर सब लोगों को यह एहसास दिलाया जा सके कि ईमानदारी से सबकी भलाई के सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य ही सबसे पहले रखे गए हैं तो फिर समाज में एकता के साथ इन उद्देश्यों को प्राप्त करने की दृढ़ इच्छा शक्ति भी आएगी। इस समय यदि हम अपने समाज में ऐसी एकता व दृढ़ शक्ति प्राप्त करने के लिए सबसे सार्थक लक्ष्य चाहते हैं तो बाल मृत्यु दर को कम करना और इस तरह लाखों बच्चों का जीवन बचाना सबसे सार्थक लक्ष्य है।

किसी भी देश या समाज के सार्थक विकास के लिए यह बहुत जरूरी है कि जो उद्देश्य वास्तव में पूरे समाज की भलाई से जुड़े हैं, उन्हें सबसे ऊपर की प्राथमिकता दी जाए और उन्हें प्राप्त करने के लिए समाज में व्यापक एकता स्थापित की जाए। जब सबकी भलाई से जुड़े इस तरह के उद्देश्यों के प्रति समाज में समर्पण नहीं होता है, तभी भटकाव और अनिश्चय में समाज की क्षमता बिखरने लगती है।

हमारे देश की सभ्यता–संस्कृति में तो मानव–जीवन बचाने को बहुत महत्व दिया ही गया है, साथ में ह्यूमन डेवलपमेंट या मानवीय विकास की नवीनतम सोच भी सही विकास की एक बहुत महत्वपूर्ण पहचान इसी को मानती है कि मानव जीवन को कितना बढ़ाया गया और मृत्यु–दर, विशेषकर बाल मृत्यु–दर को कितना कम किया गया। अगर हम इस विषय पर आम लोगों के विचार प्राप्त करें तो यही पाएंगे कि वे मानव–जीवन की रक्षा विशेषकर छोटे बच्चों की जीवन रक्षा को सबसे अधिक लोक–कल्याणकारी व परोपकार का कार्य मानते हैं। ऐसी व्यापक जन–भावनाओं के बावजूद बहुत दुख की बात यह है कि आज हमारे देश में मृत्यु–दर, विशेषकर बाल मृत्यु–दर बहुत अधिक है। यदि प्रतिवर्ष दसियों लाख जीवन बचाने को एक प्रमुख राष्ट्रीय लक्ष्य व राष्ट्रीय अभियान का रूप दिया जाए तो इससे देश में एक बहुत उत्साहवर्धक नया माहौल बन सकता है। प्रतिवर्ष लाखों

जीवन बचाने जैसे अभियानों से जुड़ने से किसी भी व्यक्ति के जीवन में नई सार्थकता और उमंग आ सकती है।

इस अभियान के वैसे तो कई पक्ष होंगे, लेकिन भूख और कुपोषण को कम करना, विशेषकर बच्चों व महिलाओं में भूख व कुपोषण को कम करना संभवतः इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण हिस्सा होगा। इस समय भूख विशेषकर कुपोषण की जो चिंताजनक स्थिति है, उसकी गंभीरता को स्वीकारते हुए भूख और कुपोषण के विरुद्ध अभियान को उच्चतम प्राथमिकता देनी चाहिए। बच्चों, गर्भवती महिलाओं, शिशु को दूध पिलाने वाली माताओं के पोषण को बेहतर करने के साथ स्वास्थ्य सेवाओं का सब तक पहुँचना बहुत जरूरी है। विशेषकर बच्चे के जन्म के समय डाक्टर या भली–भांति प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मी की उपस्थिति आवश्यक है। परंपरागत दाईयों को बेहतरीन प्रशिक्षण देकर इस भूमिका को अच्छी तरह निभाने के लिए तैयार किया जा सकता है। स्वास्थ्य व पोषण के लिए कुल बजट बहुत बढ़ाना होगा व क्रियान्वयन भी बेहतर करना होगा।

आंकड़े बताते हैं कि भारत में शिशु मृत्यु दर व बाल मृत्यु दर केवल विकसित देशों की तुलना में ही नहीं, बल्कि वियतनाम और श्रीलंका जैसे विकासशील देशों की तुलना में भी काफी अधिक है। श्रीलंका और वियतनाम में जहां शिशु मृत्यु दर प्रति एक हजार क्रमशः 12 और 16 है, वहीं भारत में यह 56 है। इसी तरह मातृ मृत्यु दर भी बहुत अधिक है।

बाल कुपोषण की स्थिति का पता इससे चलता है कि कम वजन के बच्चों का प्रतिशत बहुत अधिक है। राष्ट्रीय आय में सार्वजनिक स्वास्थ्य खर्च का प्रतिशत बहुत कम है। अधिकांश बच्चों के जन्म के

समय अभी हमारे देश में प्रशिक्षित स्वास्थ्य कर्मियों की उपस्थिति सुनिश्चित नहीं हो सकी है। क्या यह बहुत चिंता की बात नहीं है कि हमारा पड़ोसी देश श्रीलंका शिशु मृत्यु बाल मृत्यु दर को 12 तक कम कर सका है, जबकि भारत की बाल मृत्यु दर 56 है यानी श्रीलंका के मुकाबले चार गुणा से भी अधिक है। 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्यु दर को देखें तो यह श्रीलंका में 14 है तो भारत में 74 है यानी भारत में यह पांच गुणा अधिक है। मातृ मृत्यु दर (प्रति 1 लाख जन्म) श्रीलंका में 58 है तो भारत में 450 है यानी लगभग 8 गुणा अधिक है।

हमारे अपने देश में भी केरल राज्य ने मृत्यु दर व शिशु मृत्यु दर कम करने में बहुत उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। केरल में 96 प्रतिशत बच्चों के जन्म के समय स्वास्थ्यकर्मियों की उपस्थिति सुनिश्चित हो सकी है। केरल में शिशु मृत्यु दर मात्र 16 है, जबकि उत्तर प्रदेश में यह 85 है।

श्रीलंका व वियतनाम के उदाहरण से बताया गया है कि कई प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद बाल मृत्यु दर में तेज कमी संभव है। 1970 और 2005 के बीच श्रीलंका ने बाल–मृत्यु को 100 से 14 कर दिखा दिया। वियतनाम ने भी बहुत प्रतिकूल हालत में ऐसी ही महत्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त की।

हमारे अपने देश में भी केरल राज्य ने मृत्यु दर व शिशु मृत्यु दर कम करने में बहुत उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। केरल में 96 प्रतिशत बच्चों के जन्म के समय स्वास्थ्यकर्मियों की उपस्थिति सुनिश्चित हो सकी है। केरल में शिशु मृत्यु दर मात्र 16 है, जबकि उत्तर प्रदेश में यह 85 है। अगर केरल इस क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता हसिल कर सका है तो देश के अन्य राज्यों के लिए भी यह संभव है। अगर मृत्यु दर विशेषकर बाल व शिशु मृत्यु दर को कम करने को हम एक राष्ट्रीय अभियान बना कर निष्ठापूर्वक कार्य करें तो सफलता अवश्य मिलेगी। ❑

साम्यवाद की असलियत

मार्क्सवाद के प्रारंभिक मतप्रचारक जब भारत आए तो कुंभ के मेले में उमड़े जनसैलाब को देखकर उन्हें बड़ी मायूसी हुई थी और उन्होंने तब ही यह मान लिया था कि इस अध्यात्म प्रधान देश में साम्यवाद का पल्लवित होना मुश्किल काम है। . . .अनीश्वरवाद की पताका लहराने वालों को केसरिया रंग में सांप्रदायिकता और हरे झंडे में सद्भावना झलकती है। इस कलुषित विचारधारा से सामाजिक समरसता कैसे संभव है, जिसके सृजन का भार कथित तौर पर साम्यवादियों ने अपने कंधे पर उठा रखा है?

■ **बलबीर पुंज**

वास्तव में देखा जाए तो मार्क्सवादी चिंतन ही अफीम है, क्योंकि यह लोगों के सामने एक ऐसी व्यवस्था का सपना परोसता है जिसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। साम्यवाद मौजूदा दौर में अप्रासंगिक हो चुका है। आने वाला समय वर्ग संघर्ष का नहीं होकर सभ्यताओं के संघात का काल होगा।

अभी हाल के दिनों में मार्क्सवादी दर्शन बनाम आस्था समाचार पत्रों में चर्चा का विषय रहा है। वास्तव में मजहब को लेकर वामपंथियों का रवैया विरोधाभासों से भरा है। उनका मानना है कि धर्म अफीम है। वे एक मजहबविहीन समाज बनाना चाहते हैं, क्योंकि मजहब अंधविश्वास फैलाता है। हालांकि निरीश्वरवादी साम्यवादियों की कथनी और करनी में कभी साम्य नहीं रहा। मुस्लिम लीग को छोड़कर मार्क्सवादियों का ही वह अकेला राजनीतिक कुनबा था, जिसने मजहब आधारित पाकिस्तान के सृजन को न्यायोचित ठहराया। मोहम्मद अली जिन्ना को मार्क्सवादियों ने ही वे सारे तर्क–कुतर्क उपलब्ध कराए, जो उसे अलग पाकिस्तान के निर्माण के लिए चाहिए थे। एक तरह से पाकिस्तान के जन्म में वामपंथियों ने दाई की भूमिका निभाई है। आजादी के बाद केरल में कम्युनिस्ट मुख्यमंत्री ईएमएस नंबूदरीपाद ने मुस्लिम बहुल एक नए जिले–मल्लपुरम का सृजन किया। मुस्लिम कट्टरपंथ को कम्युनिस्टों का सहयोग व समर्थन हमेशा मिलता रहा है। वह चाहे सद्दाम हुसैन का मसला हो या फलस्तीन–ईरान का–मार्क्सवादी कट्टरंथियों के मजहबी जुनून में हमेशा शरीक होते आए।

सात समंदर पार एक डेनिश कार्टूनिस्ट ने पैगंबर साहब का अपमानजनक कार्टून बनाया तो उसका भारत के मुसलमानों ने हिंसक विरोध किया। उनके साथ कम्युनिस्टों का लाल झंडा भी शहर दर शहर लहराता रहा। बांग्लादेशी लेखिका तस्लीमा नसरीन को कट्टरपंथियों की अनुचित मांग के कारण ही रातोरात कोलकाता से बेघर कर दिया गया। दुनिया के जिस भाग में साम्यवादियों की सरकार आई, कम्युनिस्टों का पाखंड ज्यादा दिनों तक छिपा नहीं रह सका। उन्होंने वर्ग विहीन, शोषण विहीन, और भयमुक्त समतावादी खुशहाल समाज देने का दावा किया। जिस तरह कोई पुजारी या मौलवी चढ़ावे के बदले में अपने भक्तों में स्वर्ग या जन्नत का अंधविश्वास पैदा करता है, कम्युनिस्टों ने खुशहाल समाजवाद के नाम पर ऐसा ही छलावा किया है। नब्बे के दशक तक समाजवाद का मुलम्मा उतर गया था। सोवियत संघ में तो समाजवादी ढांचे के कारण बदहाली और तंगहाली का आलम यह था कि लोगों को अपनी हर जरूरत के लिए लाइन पर लगना होता था। सोवियत–आर्थिक ढांचे से प्रेम के कारण ही अपने देश में भी यही स्थिति आई और

1991 में देश को अपनी अंतरराष्ट्रीय देनदारियों को पूरा करने के लिए अपना स्वर्ण भंडार गिरवी रखना पड़ा था।

चीन का अस्तित्व बना हुआ है तो उसका कारण यह है कि वहां माओ के बाद के शासकों ने समय रहते खतरे की आहट भांप ली और वामपंथी अधिनायकवाद के नीचे एक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की स्थापना की। हमारे यहां केरल और पश्चिम बंगाल में कम्युनिस्टों का शासन रहा है और दोनों ही राज्यों में आम आदमी त्रस्त है। जिस सर्वहारा के कल्याण की मार्क्सवादी कसमें खाते हैं, वही वहां हाशिए पर हैं। 575 जिलों में अध्ययन करने के बाद पहली बार प्रकाशित एक आधिकारिक आकलन के अनुसार देश के 1.47 प्रतिशत गरीब ग्रामीण भारतीय पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद में हैं। जिले की 56 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा के नीचे है तो शहरी आबादी का 36. 6 प्रतिशत गरीब है। ग्रामीण गरीबी के मापदंड पर पश्चिम बंगाल का स्थान चौथा है। 169 लाख आबादी गरीबी रेखा के नीचे है। भारत के सौ गरीब ग्रामीण जिलों में पश्चिम बंगाल के कुल 18 जिलों में से 14 इस सूची में शामिल हैं। केरल की स्थिति भी ऐसी ही है। व्यक्ति की निजी आस्था पर मार्क्सवादियों का पहरा हास्यास्पद है। अपने यहां ही नहीं, पूरी दुनिया में आध्यात्मवाद की एक तरह से वापसी दिखाई दे रही है और संशयवादियों का वैज्ञानिक तर्क भी काम नहीं आ रहा। धर्म अफीम है, इससे दूर रहो, परवान चढ़ने वाली नहीं है। आस्था के प्रश्न पर स्वयं मार्क्सवादी पार्टी के कार्यकर्ताओं का मुखर विरोध इसे ही रेखांकित करता है।

मार्क्सवाद के प्रारंभिक मतप्रचारक जब भारत आए तो कुंभ के मेले में उमड़े जनसैलाब को देखकर उन्हें बड़ी मायूसी हुई थी और उन्होंने तब ही यह मान लिया था कि इस अध्यात्म प्रधान देश में साम्यवाद का पल्लवित होना मुश्किल काम है। जन्म के नब्बे साल बाद इस विशाल भारत देश के मात्र तीन राज्यों में ही पार्टी अपना असर बना पाई है। ऐसे में केरल के एक सदस्य और पूर्व सांसद डा. केएस मनोज ने अपनी आस्था व उपासना के अधिकार की रक्षा के लिए त्यागपत्र दिया और उसके समर्थन में जब समर्थकों का एक बड़ा वर्ग उठ खड़ा हुआ है तो नास्तिक माकपाइयों का बैकफुट पर जाना स्वाभाविक है।

डा. केएस मनोज को 2004 में माकपा ने तब लोकसभा का टिकट दिया था, जब वे केरल लैटिन कैथोलिक एसोसिएशन के अध्यक्ष थे। लैटिन कैथोलिक के करीब बीस लाख अनुयायियों में डा. मनोज का अच्छा प्रभाव है। तब नास्तिक माकपा को आस्तिक डा. मनोज से कोई परहेज भी नहीं हुआ था। क्यों? व्यापक विरोध को देखते हुए पार्टी प्रमुख प्रकाश करात अब नास्तिक दर्शन से हटते हुए यह कह रहे हैं कि पार्टी मत धर्मपंथ या ईश्वर में आस्था के खिलाफ न होकर सांप्रदायिकता के खिलाफ है। यह मार्क्सवादियों की बौद्धिक बाजीगरी मात्र है। वस्तुतः वे उसी लीक का अनुपालन कर रहे हैं, जो मार्क्स और लेनिन खींच गए हैं। मार्क्स ने कहा था, मजहब को न केवल ठुकराना चाहिए, बल्कि इसका तिरस्कार भी होना चाहिए। उसका मार्क्सवाद 19वीं सदी के यूरोप से प्रसूत था। तब बौद्धिक और आर्थिक कारणों से समाज पर मजहब की पकड़ एक अभिशाप बन गया था। 17वीं सदी तक दुनिया की राजनीति का केंद्र रहे यूरोप को एक नए पंथनिरपेक्ष छवि की आवश्यकता थी। उसके लिए जो आंदोलन चला, माघ्र्क्सवाद उसी से प्रभावित है।

मार्क्सवादियों ने मजहब को व्यक्तिगत विश्वास व मान्यता या सांस्कृतकि विशिष्टता के दृष्टिकोण से नहीं देखा, उन्होंने इसे एक राजनीतिक चुनौती के रूप में लिया, परंतु भारत में हिंदू मत कभी संगठित नहीं रहा और न ही राज्य के शासन से इसका कोई सरोकार ही रहा।

मार्क्सवादियों ने मजहब को व्यक्तिगत विश्वास व मान्यता या सांस्कृतकि विशिष्टता के दृष्टिकोण से नहीं देखा, उन्होंने इसे एक राजनीतिक चुनौती के रूप में लिया, परंतु भारत में हिंदू मत कभी संगठित नहीं रहा और न ही राज्य के शासन से इसका कोई सरोकार ही रहा। भारत में शासन और मत, दो अलग स्तरों पर काम करते हैं और उनके बीच सत्ता के नियंत्रण के लिए कोई संघर्ष ही नहीं है। वास्तव में देखा जाए तो मार्क्सवादी चिंतन ही अफीम है, क्योंकि यह लोगों के सामने एक ऐसी व्यवस्था का सपना परोसता है जिसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। साम्यवाद मौजूदा दौर में अप्रासंगिक हो चुका है। आने वाला समय वर्ग संघर्ष का नहीं होकर सभ्यताओं के संघात का काल होगा। एक समय ऐसा था, जब लगता था कि यूरोप से लेकर एशिया और अमेरिका से लेकर अफ्रीका के हर कोने लाल झंडे से पट जाएंगे, किंतु अब इस्लामी कट्टरवाद का जहर बेसलान से लेकर जकार्ता और न्यूयार्क से लेकर ढाका तक फैल चुका है। कट्टरपंथियों के जुनूनी आंदोलन को कम्युनिस्टों का बिन मांगा सहयोग प्राप्त होता है।

क्या इस्लाम के साथ आस्था का प्रश्न खड़ा नहीं होता? अनीश्वरवाद की पताका लहराने वालों को केसरिया रंग में सांप्रदायिकता और हरे झंडे में सद्भावना झलकती है। इस कलुषित विचारधारा से सामाजिक समरसता कैसे संभव है, जिसके सृजन का भार कथित तौर पर साम्यवादियों ने अपने कंधे पर उठा रखा है? ❑

प्रतिभाओं की घर वापसी का दौर

केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा प्रवासी भारतीयों को जिला विकास एवं क्षेत्र विकास कार्यों तथा योजनाओं में स्थान देना होगा। हम आशा करें कि एक ओर देश की प्रतिभाओं का देश के विकास का संकल्प और दूसरी ओर प्रवासी भारतीयों की भारत के विकास में सहभागिता भारत को विकसित देश बनाने के साथ–साथ दुनिया की आर्थिक महाशक्ति बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

■ **जयंतीलाल भंडारी**

पिछले कुछ सालों में भारत ने आर्थिक मोर्चे पर बड़ी कामयाबी हासिल की है। देश की अर्थव्यवस्था एक खरब डालर वाली हो गई है। देश की 200 से ज्यादा कंपनियां विश्व स्तर की हैं। यहां विदेशी निवेशकों से भारी मात्रा में धन आ रहा है। देश में शेयर बाजारों में विदेशी निवेशकों का संस्थागत निवेश ऊंचाइयां ले रहा है। विदेशी मुद्रा कोष 285 अरब डालर से ऊपर हो गया है। इसके मद्देनजर दुनिया के विकसित और विकासशील देश भारत से सहयोग वृद्धि की उम्मीद रखते हैं।

आधुनिक तकनीक, व्यापक मानव संसाधन और वैज्ञानिक क्षेत्र में दक्षता भारत को जापान और अमेरिका के समकक्ष खड़ा करती हैं। जैसे–जैसे देश आर्थिक शक्ति बनने की राह पर आगे बढ़ रहा है, वैसे–वैसे प्रवासी भारतीय प्रतिभाओं का झुकाव भी देश की और बढ़ता जा रहा है। इसमें दो मत नहीं कि पिछले कई दशकों से देश प्रतिभा पलायन (ब्रेन ड्रेन) से चिंतित रहा है लेकिन अब यह स्थिति तेजी से बदल रही है। सरकार बार–बार भारतीय मूल की प्रतिभाओं से ज्ञान और कौशल के साथ स्वदेश लौटने का आग्रह कर रही है। तिरूवनंतपुरम में भी तीन जनवरी 2010 को 97वीं भारतीय विज्ञान कांग्रेस में प्रधानमंत्री ने कहा कि ब्रेन ड्रेन को ब्रेन गेन में बदलकर भारत में विज्ञान और तकनीक को नया आयाम देने के लिए कदम बढ़ाए जा रहे हैं।

ऐसे कई प्रयासों के जरिए भारत ने अपने कारोबारियों, वैज्ञानिकों, तकनीकी विशेषज्ञों, शोधकर्ताओं और उद्योगपतियों को स्वदेश बुलाने के लिए अभियान चलाया हुआ है। ब्रिटेन में कार्यरत भारतीय मूल के करीब 25 हजार डाक्टर भारत लौटने की तैयारी में हैं। विदेश जाने वाली प्रतिभाओं की संख्या भी घट रही है। रोजगार और आर्थिक संकट से घिरे अमेरिका सहित पूरे यूरोप में कार्यरत बहुत से पेशेवर, तकनीकी विशेषज्ञ और शोधकर्ता अब अपने देश की और कूच कर रहे हैं। निश्चित रूप से भारत को विकसित देश बनाने में भारतीय प्रवासियों की भूमिका भी महत्वपूर्ण होनी चाहिए।

दुनिया में चीन के बाद भारत दूसरा बड़ा देश है, जिसके लोग दुनिया के कोने–कोने में बसे हैं। प्रवासी भारतीय अपने देश को धन भेजने के मामले में भी अन्य प्रवासियों के मुकाबले सबसे आगे हैं। 2007–08 में इन्होंने 43 अरब डालर की विदेशी मुद्रा भारत भेजी, जबकि 2008–09 में 52 अरब डालर की कमाई भारत भेजी। लेकिन देश की भारी वित्तीय जरूरतों के परिप्रेक्ष्य में प्रवासियों द्वारा धन का प्रवाह तेजी से बढ़ाया जाना जरूरी है। प्रवासी भारतीय देश में सिर्फ धन का निवेश ही न करें, बल्कि अपने ज्ञान और अनुभव का साझा भी करें। जहां एक और भारत सरकार विभिन्न विदेशी विश्वविघालयों के साथ एक्सचेंज प्रोग्रामों को प्रोत्साहन दे वहीं दूसरी और विदेशों में बसे प्रवासी भारतीय पेशेवरों के साथ

पिछले कुछ सालों में भारत ने आर्थिक मोर्चे पर बड़ी कामयाबी हासिल की है। देश की अर्थव्यवस्था एक खरब डालर वाली हो गई है। देश की 200 से ज्यादा कंपनियां विश्व स्तर की हैं। यहां विदेशी निवेशकों से भारी मात्रा में धन आ रहा है। देश में शेयर बाजारों में विदेशी निवेशकों का संस्थागत निवेश ऊंचाइयां ले रहा है।

भारतीयों द्वारा व्यापार व साझेदारी की कोशिश भी की जानी चाहिए ताकि प्रवासियों की क्षमता व कौशल का लाभ उठाया जा सके।

अगर भारतीय मूल के साफ्टवेयर इंजीनियर, अच्छे प्रबंधक और बड़े चिकित्सक खुद को भारत के साथ जोड़ते हैं तो इसका महत्व उतना ही होगा, जितना किसी आर्थिक निवेश का होता है। चूंकि प्रवासी भारतीय अपने–अपने देशों में उघोग–व्यवसाय में अच्छी साख रखते हैं और जानते हैं कि उनके प्रयासों से नई पीढ़ी को कैसे अच्छे रोजगार के मौके मिल सकते हैं, अतएव भारतीय युवाओं के लिए विदेशी डगर पर कदम आगे बढ़ाना सरल होगा।

यदि हम सच में अपनी प्रतिभाओं को देश में बुलाना चाहते हैं तो कुछ बातों पर ध्यान देना होगा। आठवें प्रवासी भारतीय सम्मेलन में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह द्वारा एनआरआई को 2014 के आम चुनाव में वोट डालने के अधिकार की घोषणा को कार्यान्वित करना होगा। उनका निवेश सुरक्षित रखने की गारंटी देनी होगी। 130 देशों के करीब ढ़ाई करोड़ प्रवासी भारतीयों को चुनाव प्रक्रिया में शामिल करने के त्वरित प्रयास शुरू हों। प्रवासी भारतीयों की संपत्ति से जुड़े विवादों के निपटारे के लिए फास्ट ट्रैक अदालतों का गठन किया जाए साथ ही देश को सत्यम जैसे घोटलों से भी बचाना होगा।

केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा प्रवासी भारतीयों को जिला विकास एवं क्षेत्र विकास कार्यों तथा योजनाओं में स्थान देना होगा। हम आशा करें कि एक ओर देश की प्रतिभाओं का देश के विकास का संकल्प और दूसरी ओर प्रवासी भारतीयों की भारत के विकास में सहभागिता भारत को विकसित देश बनाने के साथ–साथ दुनिया की आर्थिक महाशक्ति बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। ❑

108 दिवसीय विश्व मंगल गो ग्राम यात्रा का नागपुर में समापन

ग्रामोदय से राष्ट्रोदय का प्रतीक है गोमाताः बाबा रामदेव

17 जनवरी, 2010 को गोरक्षा के लिए 108 दिन तक सम्पूर्ण देश को झकझोरने के बाद विश्व मंगल गो ग्राम यात्रा सम्पन्न हुई। रेशिम बाग मैदान में आयोजित विशाल समापन सभा को संबोधित करते हुए सुप्रसिद्व योग गुरू बाबा रामदेव ने कहा कि गोमाता आत्म उपचार और आत्म साक्षात्कार का आधार है और यह ग्रामोदय से राष्ट्रोदय का प्रतीक भी है। उन्होंने कहा कि गाय कोई सांप्रदायिक प्राणी नहीं है, यह बिना किसी भेदभाव के सभी का पालन करती है। उन्होंने चेतावनी दी कि यदि आज गाय नहीं बची तो पूरी दुनिया का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा।

बाबा रामदेव ने उपस्थित जनसमूह का आह्वान करते हुए कहा कि सभी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से गोसेवा करें। उन्होंने कहा कि प्रातःकाल गोमूत्र का सेवन अनेक बीमारियों का शमन करता है और कब्जी होने की संभावना समाप्त हो जाती है। उन्होंने कहा कि गाय अगर दूध न भी दे तो भी सिर्फ गोमूत्र और गोबर से पर्याप्त आय हो सकती है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मोहनराव भागवत ने कहा कि एक समय था जब गाय और गांव की बात को पिछड़ी बात माना जाता था। लेकिन आज आधुनिक युग में यही मुख्य चिंतन की बात मानी जा रहा है।

उन्होंने कहा कि शहर जितना बड़ा बनेगा, उतना ही बेखबर भी बनेगा। गांव में मनुष्य मनुष्य को पहचानता है, अतः वह स्वतंत्रता, समरसता और सुख का अनुभव करता है, और नियंत्रण विहीन व्यवस्था होते हुए भी अनुशासित समाज होता है। उन्होंने गोग्राम आधारित जीवन को विकेंद्रित और प्रकृति के समीप का युगानुकुल तरीका बताया। उन्होंने कहा कि यह यात्रा का उद्यापन है। केवल नारों से काम चलने वाला नहीं है। उन्होंने देशवासियों को आह्वान किया कि वे गाय को जीवन में लाने के लिए दो चार कदम आगे बढ़ाएं।

योग गुरू बाबा रामदेव और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक श्री मोहन भागवत के अलावा करवीर पीठ के शंकराचार्य श्री नृसिंह भारती सरस्वती, आचार्य महासभा के अध्यक्ष स्वामी दयानंद सरस्वती, गोकर्ण पीठाधीश्वर शंकराचार्य श्री राघवेश्वर भारती स्वामीजी, जैन मुनि श्री पवित्र सागर महाराज, बौद्व संत भंते ज्ञान जगत महाराज, नवबौद्व संत भदंत राहुल बौधि, मौलाना बशीर कादरी आदि ने गोरक्षा के प्रति अपना संकल्प व्यक्त किया।

समापन कार्यक्रम से पूर्व यात्रा समिति के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष डा एच आर नागेन्द्र, राष्ट्रीय सचिव श्री शंकरलाल एवं अन्य पदाधिकारियों ने दीक्षा भूमि जाकर भारत रत्न डा भीमराव अम्बेडकर को श्रद्वांजलि अर्पित की।

यात्रा के राष्ट्रीय सचिव श्री शंकरलाल ने बताया कि 108 दिन चली विश्व मंगल गो ग्राम यात्रा ने देश का अनवरत भ्रमण किया और दस हजार उपयात्राओं ने पूरे देश को मथ डाला। गांव–गांव, गली–गली, नगर–नगर, डगर–डगर यात्राओं का अभूतपूर्व स्वागत हुआ। हिन्दू ही नहीं ईसाई और मुस्लिम समाज के लोगों ने भी इसमें बढ़–चढ़कर भाग लिया। **– प्रस्तुति आशुतोष**

समस्या

विकलांगों की बस्ती में सत्ता की खामोशी

फ्लोराइड प्रभावित इन गावों को लेकर स्वास्थ्य विभाग का रवैया बेहद शर्मनाक है। कस्बाई इलाकों में नियुक्ति को लेकर कसरतें (प्रैक्टिस) कर रहे चिकित्सक इन गांवों में नहीं जाते। रोहनिया डामर के बालकिशुन बताते हैं अब तो कोई दवाएं देने भी नहीं आता। सब जानते हैं हमारी किस्मत में सिर्फ मौत लिखी है।

■ आवेश तिवारी

फ्लोरोसिस से हो रही इस भारी तबाही के लिए आदित्य बिरला ग्रुप की हिंडाल्को इंडस्ट्रीज लिमिटेड और कनोरिया केमिकल सीधे तौर पर जिम्मेदार हैं लेकिन लखनऊ से दिल्ली तक सभी शर्मनाक चुप्पी साधे बैठे हैं।

सोनभद्र में 12 वर्ष का शम्भू कैमरे को देखकर पत्थर उठा लेता है। क्यूँ न उठाये वो पत्थर? सत्ता की शर्मनाक चुप्पी, प्रशासन की बदनीयती और जनप्रतिनिधियों की कथन खसोटी का असर कुछ तो होना था। गनीमत है कि अति नक्सल प्रभावित इस जनपद का रहने वाला अपाहिज शम्भू अभी भी बन्दूक नहीं उठा रहा। सिर्फ शम्भू ही नहीं जिंदगी को घिसट–घिसट कर चलना सोनभद्र के उन हजारों स्त्री, पुरुष की नियति है जिन्हें फ्लोरोसिस का कहर तिल तिल कर मार रहा है।

जनपद में फ्लोरोसिस नियंत्रण को लेकर किये जा रहे तमाम सरकारी दावे थोथे साबित हुए हैं। नतीजा ये है कि जनपद में विकलांगों की नयी बस्तियां तैयार हो रही हैं। जनपद के पडवा कोद्वारी, रोहनिया डामर, माधुरी, कुसुम्हा, रूहानिया डामर, गोबरदाहा, निरुहिया डामर, राजो, बिछियारी समेत सैकड़ों इलाकों में आपको मौत का इन्तजार करते चेहरे मिल जायेंगे। राज्य पोषित विकलांगता का हाल ये है कि जलनिधि समेत तमाम योजनाओं मे करोड़ों रुपए खर्च किए जाने के बावजूद यहाँ के आदिवासी गिरिजनों के हिस्से में एक बूँद भी स्वच्छ पानी नहीं है। फ्लोराइड रूपी जहर न सिर्फ इनकी नसों मे घुल रहा है बल्कि निर्बल व निरीह आदिवासियों के सामाजिक–आर्थिक ढाँचे को भी छिन्न–भिन्न कर रहा है। आज भी यहाँ के आदिवासी गिरिजन जहर मिश्रित जल पीने को मजबूर हैं। फ्लोरोसिस से हो रही इस भारी तबाही के लिए आदित्य बिरला ग्रुप की हिंडाल्को इंडस्ट्रीज लिमिटेड और कनोरिया केमिकल सीधे तौर पर जिम्मेदार हैं लेकिन लखनऊ से दिल्ली तक सभी शर्मनाक चुप्पी साधे बैठे हैं। स्थिति की गंभीरता का अंदाजा आप इसा तथ्य से लगा सकते हैं कि हाल ही में देहरादून स्थित पीपुल साइंस इंस्ट्टीयूट ने जब लगभग 147 गांवों के 3588 बच्चों में फ्लोराइड के असर का परीक्षण किया तो 2219 बच्चों में इसका असर पाया गया।

अगर आपको बेचारगी का चेहरा देखना है तो सोनभद्र आइये। कुसुम्हा गांव से गुजरते वक्त हमें अपाहिज बच्चों का एक झुंड हैंडपंप से लड़ते दिखता है। जल निगम द्वारा लगाये गए इस हैंडपंप में फ्लोराइड प्रदूषित जल को साफ करने के लिए फिल्टर लगा है। गांव के लोग

बताते हैं पिछले 2 वर्षों से फिल्टर में केमिकल नहीं डाला गया सो ये बेकार हो गया है। पास ही की एक झोपडी में जब हम घुसते हैं तो देखते हैं दो छोटे बच्चे जमीन पर नंगे खेल रहे हैं। चलने से लाचार माँ सुखदेवी बिस्तर पर लेटी हुई है। बच्चों के दाँतों पर भी फ्लोराइड का असर साफ नजर आता है। सुखदेवी कहती है हमने बच्चों को जन्म देकर बहुत बड़ा पाप किया। हमारे माँ बाप गरीब थे तो ऐसे गांव में शादी कर दी अब तो कोई अपनी बेटी इस गांव को नहीं देना चाहता। वहीं कुछ दूर पडवा कोद्वारी गांव में बिस्तर पर लेटा गुलाब हमारे सवालों को सुनकर फूट–फूट कर रो पड़ता है। फ्लोराइड ने उसके साथ साथ तीन जवान बेटों और पत्नी को भी पंगु बना दिया। वो बताता है कि अब हम दाने–दाने को मोहताज हैं। नरेगा में भी हमें काम नहीं मिलता। न तो हम मजदूरों को पानी पिला सकते हैं और न कोई और काम कर सकते हैं। फ्लोरोसिस प्रभावित जिन भी गांवों का हमने दौरा किया वहां पाया की जबर्दस्त जल संकट से जूझ रहे इलाकों में लोग मजबूरन लाल निशान लगे फ्लोराइड प्रदूषित चापाकलों का पानी पी रहे हैं। पडवा कोद्वारी में जल निगम द्वारा स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति हेतु मोटर तो लगा दी गयी लेकिन जनरेटर में तेल न होने की वजह से पिछले 3 वर्षों से पानी की आपूर्ति ठप्प हैं।

कोद्वारी के रामप्रताप का शरीर इस कदर अकडा कि वो चारपाई से कभी उठ नही पाते उनकी पत्नी व लड़का भी इस भयावह रोग की चपेट मे हैं। कमोबेश यही हाल रामवृक्ष, चन्द्रभान, हरिकृष्ण समेत अन्य परिवारों का है बच्चों मे जहाँ फ्लोराइड की वजह से विषम अपंगता व आंशिक रुग्नता देखने को मिल रहा है। वहीं गांव के विवाहितों ने अपनी प्रजनन व कामशक्ति खो दी है गांव के रामनरेश, कैलाश आदि बताते हैं कि अब कोई भी अपने लड़के–लड़कियों की शादी हमारे गांव मे नही करना चाहता। देखियेगा एक दिन हमरे गांव टोलों का नामोनिशाँ मिट जाएगा। महिलाओं मे फ्लोराइड का विष कहर बरपा रहा है। इलाके मे गर्भस्थ शिशुओं के मौत के मामले सामने आ रहे हैं। स्त्रियाँ मातृत्व सुख से वंचित हैं वहीं घेंघा, गर्भाशय के कैंसर समेत अन्य रोगों का भी शिकार हो रहे हैं। लगभग 80 फीसदी औरतों ने शरीर के सुन्न हो जाने की शिकायत की है। नई बस्ती की लीलावती, शांति, संतरा इत्यादि महिलाएं कहती हैं की हम बच्चे पैदा करने से डरते हैं हमें लगता हैं की वो भी कहीं इस रोग का शिकार न हो जाए।

गांव के रामनरेश, कैलाश आदि बताते हैं कि अब कोई भी अपने लड़के–लड़कियों की शादी हमारे गांव मे नही करना चाहता। देखियेगा एक दिन हमरे गांव टोलों का नामोनिशाँ मिट जाएगा। महिलाओं मे फ्लोराइड का विष कहर बरपा रहा है।

हमारे माँ बाप गरीब थे तो ऐसे गांव में शादी कर दी अब तो कोई अपनी बेटी इस गांव को नहीं देना चाहता। वहीं कुछ दूर पडवा कोद्वारी गांव में बिस्तर पर लेटा गुलाब हमारे सवालों को सुनकर फूट–फूट कर रो पड़ता है। फ्लोराइड ने उसके साथ साथ तीन जवान बेटों और पत्नी को भी पंगु बना दिया।

फ्लोराइड प्रभावित इन गावों को लेकर स्वास्थ्य विभाग का रवैया बेहद शर्मनाक है। कस्बाई इलाकों में नियुक्ति को लेकर कसरतें (प्रैक्टिस) कर रहे चिकित्सक इन गांवों में नहीं जाते। रोहनिया डामर के बालकिशुन बताते हैं अब तो कोई दवाएं देने भी नहीं आता। सब जानते हैं हमारी किस्मत में सिर्फ मौत लिखी है। आदिवासी बहुल इस जनपद में फ्लूरोसिस ने आम आदिवासियों पर चौतरफा आक्रमण किया है शारीरिक अक्षमता ने उन्हें सामाजिक और आर्थिक रूप से भी पंगु बना दिया है, जमीन होने के बावजूद खेत में बीज नहीं डाले जाते। स्कूल तो हैं पर बच्चे नदारद, चिकित्सक डा प्रियाल इस पूरी स्थिति को बेहद भयावह बताते हुए कहती हैं फिलहाल तो यहाँ के आदिवासियों के पुनर्वास के अलावा इस आपदा से छुटकारा पाने का कोई विकल्प शेष नहीं है। फ्लोरोसिस का संक्रमण पोषण के स्तर से सीधे तौर पर जुड़ा होता है, जिन इलाकों में भी फ्लोरोसिस का कहर बरप रहा है वहां उसके समनांतर कुपोषण भी मौजूद है और ये एक तथ्य सरकार एयर स्वास्थ्य महकमे के चेहरे से नकाब उतार फेकने के लिए काफी है।

लेकिन सोनभद्र को चारागाह समझने वाली सरकार इनके दर्द को देखेगी, कहना मुश्किल है। जब तक हमारी आँखें खुलें संभव है एक समूची पीढ़ी नपुंसक और विकलांग हो जाए। ❑

अर्थशास्त्र के नोबेल पुरस्कार विजेता : ऑस्ट्रॉम

आपने वर्ष 2009 के लिए अर्थशास्त्र के नोबेल पुरस्कार प्राप्त इलिनोर ऑस्ट्रॉम के बारे में शायद सुना हो। उनके शोध का विषय हमारे लिए काफी महत्वपूर्ण है। जब बात सार्वजनिक संपत्ति या पारिस्थितिकी की आती है इसका प्रबंधन दो तरीके से हो सकता है। या तो सरकार इसका प्रबंधन करे, जैसा कि चीन में होता है या फिर अमेरिका व अन्य पूंजीवादी देशों की तरह इसकी देखरेख का जिम्मा निजी कंपनियों को सौंप दिया जाए। इसके अलावा एक तीसरा तरीका है जो पारंपरिक है और जिसे आजकल भुला दिया गया है। इसमें प्रबंधन का दायित्व आम लोगों पर होता है जो इन संसाधनों का उपभोग करते हैं। आजकल पारंपरिक ज्ञान को हिकारत भरी नजरों से देखा जाता है। अपने शोध में इलिनोर ने जिस चीज को साबित किया है वह यह है कि तीसरा यानी पारंपरिक तरीका ही सबसे ज्यादा उपयुक्त है। यह तर्क चौंका देने वाला है या नहीं। पुरस्कार समिति द्वारा इलिनोर के प्रशस्ति पत्र में निम्नलिखित बातें कही गई हैं।

"ऑस्ट्रॉम को सार्वजनिक संसाधनों के अध्ययन के क्षेत्र में प्रमुख विद्वान माना जाता है। ऑस्ट्रॉम का अध्ययन इस बात पर बल देता है कि मानव किस तरह पारिस्थितिकी से संवाद करता है ताकि दीर्घावधि के लिए संसाधनों को बचाए रखा जा सके। सार्वजनिक संसाधनों में जंगल, तेल के कुंए, सिंचाई प्रणाली, गोचरभूमि, मत्स्य क्षेत्र आदि शामिल हैं। उन्होंने अपना शोध कार्य अफ्रीका और पश्चिमी नेपाल में पूरा किया। अफ्रीका में उन्होंने स्थानीय लोगों द्वारा गोचर भूमि के प्रबंधन का अध्ययन किया। पश्चिमी नेपाल में उन्होंने सिंचाई प्रणाली का लेखा–जोखा लिया। ऑस्ट्रॉम का अध्ययन हमें बताता है कि समुदायों ने प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के लिए कौन–कौन से तरीके विकसित किए हैं और अधिकतर

घूमती कलम

kashmirilal@rediffmail.com

मामलों में पारिस्थितिकी को खत्म होने से कैसे बचाया है। हालांकि कुछ तरीके संसाधनों को खत्म होने से रोकने में विफल रहे हैं। उनका हालिया अध्ययन मानव और पारिस्थितिकी के बीच होने वाले संवाद के विभिन्न पहलुओं पर जोर देता है।"

सबसे ज्यादा प्रभावित करने वाली बात मुझे यह लगती है कि वह अपने अध्ययन से गहरी जुड़ी हैं और उनका शोध भारतीय परिवेश के लिए भी समीचीन है। हमारे जल संसाधन, जंगल आदि की सदियों से इसी दर्शन पर देखरेख होती रही है।

एक अनुमान के मुताबिक देश में अब भी 14 हजार बावड़ियों की इसी तरह देखरेख हो रही है और वे अच्छी हालत में हैं। गांधीवादी विचारक अनुपम मिश्र की पुस्तक–"आज भी खरे हैं तालाब" में कहा गया है कि राजस्थान के गांवों में अब भी सार्वजनिक तालाब की परंपरा है और इसकी देखरेख खुद गांव वाले करते हैं।

भूमंडलीकरण के इस युग में उनके अध्ययन पर ध्यान दिए जाने की जरूरत है। खासकर निजीकरण और चीन की बढ़ती निरंकुशता के इस दौर में। बहरहाल उनकी किताब का नाम भी अपने आप में खासा जिज्ञासापरक है– "मैनेजिंग बाई द कॉमंस"।

भारतीय मिथकों और लोक कथाओं में प्रबंधन के गुर

आमतौर पर आज के प्रबंधन गुरु पश्चिमी विशेषज्ञों के अंधभक्त हैं। वे अधिकतर विदेशी लोकोक्तियों, विशेषणों आदि का ही प्रयोग करते हैं। वे भारतीय लोकोक्तियों और मिथकों को हिकारत भरी नजरों से देखते हैं। लेकिन इसके विपरीत डॉ देवदत्त पटनायक जो उदारहण पेश करते हैं वह आनंददायक है। उन्होंने इन मिथकों में छिपा हुआ जो ज्ञान खोजा है वह आँख खोलने वाला है। इसकी एक बानगी यहां प्रस्तुत है।

हम प्रायः चार लोक चरित्रों के बारे में सुनते हैं। दिन में सपने देखने वाले शेख चिल्ली। किसी भी कीमत पर अपने काम को पूरा करने वाले गंगू तेली। वहीं मिट्टी का माधो जैसा है वैसा रहने दो को चरितार्थ करता है। लेकिन राजा भोज नेतृत्व करने वाले हैं और बताते हैं कि किस तरह इन सभी चीजों का संतुलन के साथ उपयोग किया जाना चाहिए। इसकी एक बानगी देखिए।

श्री प्याने तांबे का पाइप बनाते हैं और अपना कारोबार ठीक ढंग से चला रहे हैं। बाजार में आपूर्ति से ज्यादा मांग है इसलिए उनका कारोबार फल–फूल रहा है। उन्होंने अपने एचआर विभाग से कहा–"मैं सपने देखने वाला कर्मचारी नहीं चाहता। मैं ऐसा व्यक्ति चाहता हूं जो योजनाओं को लागू कर सके। नए विचारों

पर पैसे खर्च क्यों किए जाएँ? हम अपने प्रतिस्पर्धियों की नकल करें और कड़ी मेहनत से उन्हें पीछे छोड़ दें। शेख चिल्ली जैसे सपने देखने वालों के साथ उनका अनुभव बहुत बुरा था। वे उन्हें प्रेजेंटेशन देते थे और पूरे दिन आराम कुर्सी पर ही बैठकर बाजार के बारे में सोचा करते थे। वह भी अपने वातानुकूलित ऑफिस से बाहर निकले बिना।" श्री प्याने कहते थे–"उनकी यह रणनीति अन्य कंपनियों के लिए काफी अच्छी है लेकिन लेकिन मैं ऐसा व्यावहारिक व्यक्ति चाहता हूं जो मेरी योजनाओं को लागू कर सके।"

उनका व्यापार लंबे समय तक अच्छा चलता रहा लेकिन बाद में मंदी आ गई। अचानक कारोबार डूबने लगा। तांबे का पाइप कोई नहीं खरीदना चाहता था। बकाया पैसा आ नहीं रहा था। कहीं कोई आशा नहीं थी। हैरानी की बात यह थी कि इसी कारोबार में लगी एक छोटी कंपनी मंदी के इस दौर में भी अच्छा कर रही थी। एक दिन श्री प्याने के कहने पर उस छोटी कंपनी के मालिक श्री राउत अपनी सफलता का रहस्य बताने को तैयार हुए।

श्री राउत ने कहा– "मैंने पाया कि सभी पुरानी लकीर पर ही चल रहे हैं इसलिए मैंने एक छोटी सी टीम बनाई। इस टीम से उन परिस्थितियों पर सोचने को कहा, जब तांबे के पाइप की मांग न हो। तब हम अपना कारोबार कैसे करेंगे? सपना देखने वाले कई विचारों के साथ आए मैंने अपने लाभ का एक हिस्सा इन विचारों पर प्रयोग करने पर खर्च किया। सिर्फ दो आइडिया को छोड़कर सभी विफल रहे। यही दो आइडिया इस खराब समय में काम आ रहे हैं।" यहां श्री प्याने को पता चला कि श्री राउत राजा भोज हैं जो शेख चिल्लियों का सही उपयोग कर रहे है। ओह! यह सिर्फ एक वाकया है। इसी तरह डॉ. देवदत्त ने विक्रम बैताल, रामायण और अन्य लोक कथाओं पर लिखा है और इसकी तुलना पश्चिम से भी की है।

मेरा सोचना है कि कई अन्य लेखक भी दूसरे तरीके से ऐसा कर रहे होंगे। अगर आप ऐसे किसी व्यक्ति के बारे में जानते हैं तो मुझे बताइए। मैं संदीप सिंह नामक ऐसे व्यक्ति को जानता हूं जिन्होंने अपनी किताब– "द बिजनेस आफ फ्रीडम" में प्रबंधन के क्षेत्र में भुला दिए गए हमारे राष्ट्रीय नायकों के बारे में लिखा है।

बहरहाल, आपने शायद श्री किशोर बयाणी और उनकी कंपनी फ्यूचर ग्रुप के खुदरा क्षेत्र में अकल्पनीय सफलता की कहानी जरूरी सुनी होगी। डॉ देवदत्त इसी कंपनी में एक बड़े ओहदे पर हैं और उन्होंने इस विषय पर कई पुस्तकें लिखी हैं। निश्चित रूप से मैं कहानी कहने की उनकी प्रतिभा का कायल हूं लेकिन इस बारे में बहुत कम जानता हूं कि वह राजा भोज हैं या शेख चिल्ली।

स्वदेशी मेला

पिछले महीने मैं तीन स्वदेशी मेले में गया। इन मेलों में आम लोगों की भारी भागीदारी देखकर मैं गदगद हो गया। सबसे पहले मैं जमशेदपुर के मजदूर मैदान में लगे मेले में गया। अपने साथियों के साथ वंदेशंकर जी लोगों की भीड़ को देखकर गदगद थे, जो मेले में खरीदारी कर रही थी और इस पर सकारात्मक प्रतिक्रिया दे रही थी। मेले में करीब डेढ़ सौ दुकानें लगी थीं। मेले के अंतिम दिन कई नामचीन लोगों ने इसमें आयोजित कार्यक्रम में भाग लिया और वैश्वीकरण के इस दौर में स्वदेशी आंदोलन की जरूरत पर चर्चा की। मेले में सात–आठ दुकानें खादी के कपड़ों की थी । दो–तीन दुकानें ऐसी थी जो मैंने पहले कभी नहीं देखीं और यहां मार्बल से बने फर्नीचर बेचे जा रहे थे।

बाबा रामदेव और अन्य संतों द्वारा हर्बल उत्पादों का प्रचार और इनकी लोकप्रियता के कारण इनके कई स्टॉल मेले में मौजूद थे। इसके अलावा एक स्टॉल ऐसा भी था, जहां गमले में लगाकर आयुर्वेदिक हर्बल पौधे बेचे जा रहे थे। साथ में इनसे जुड़ा साहित्य भी बांटा जा रहा था ताकि इन्हें लोकप्रिय बनाया जा सके। मैं जिस दिन मेला देखने गया, उस दिन करीब पांच हजार लोगों ने इसमें शिरकत की। बहरहाल, इतनी भीड़ के बावजूद आयोजक मेला देखने आए सभी लोगों को वह सूची देना नहीं भूले, जिसमें स्वदेशी और विदेशी वस्तुओं का विवरण था।

दूसरा मेला, जहां मैं गया वह भी झारखंड में ही था। यह राज्य के बोकारो शहर में लगा था। हालांकि यह मेला दुकानों की संख्या और लोगों की भागीदारी के लिहाज से जमशेदपुर मेले से छोटा था लेकिन इस मेले की भी कई खास बातें रहीं। जहां तक मेरी जानकारी है स्वदेशी जागरण मंच द्वारा लगाए जाने वाले ऐसे मेलों में से इस मेले में स्वयंसेवकों और कार्यकताओं की संख्या सबसे ज्यादा थी। खाने–पीने के स्टॉल की यहां अपनी विशेषता थी। विशेष रूप से लिट्टी–चोखा वाले स्टॉल पर काफी भीड़ थी।

मेले में आयोजित कार्यक्रम में उपायुक्त, स्थानीय सांसद पशुपति नाथ सिंह और स्टील कारखाने के एक बड़े अधिकारी ने स्वदेशी मेले पर अपने विचार

(शेष पृष्ठ 35 पर)

भारतीय खुदरा व्यापार का भविष्य

एक ऐसी दुनिया की कल्पना कीजिए जहां उत्पादकों के लिए सप्लाई चेन के हर पांइट पर नजर रखना बेहद आसान हो। जहां आपूर्तिकर्त्ता शुरू से लेकर आखिर तक अपने हर सामान को पता करने में सक्षम हों और सामान की सूची को नियंत्रण करने में सबका सम्मिलित प्रयास हो।

■ बंदे शंकर सिंह*

एक ऐसी दुनिया की कल्पना कीजिए जहां उत्पादकों के लिए सप्लाई चेन के हर पांइट पर नजर रखना बेहद आसान हो। जहां आपूर्तिकर्त्ता शुरू से लेकर आखिर तक अपने हर सामान को पता करने में सक्षम हों और सामान की सूची को नियंत्रण करने में सबका सम्मिलित प्रयास हो। जहां हर सामान सही समय और सही स्थान पर मौजूद हो। और बिक्री के लिए हर समय सारी चीजें उपलब्ध हो। भले ही यह सब सपना लगता हो लेकिन ऐसी दुनियां अब हमारी पहुँच के दायरे में आ चुकी है।

इलेक्ट्रोनिक प्रोडक्ट कोड (मचब) व रेडियो फ्रिक्वेंसी आईडेन्टिफिकेशन (RFID) टेक्नोलॉजी वितरण व्यवस्था को नई ऊंचाईयों तक ले जाने की क्षमता रखते हैं। जहां कई उद्योगों का आपस में मिलान होता है। वहां ई.पी.सी ग्लोबल यू.एस. अपने सब्सक्राइबरों के माध्यम से इन सभी उद्योगों को स्थानीय स्तर पर यह तकनीक अपनाने व लागू करने संबंधी मदद देती है। इसके अलावा अमेरिका स्थित सब्सक्राइबरों के लिए मचब ग्लोबल यू.एस. तकनीकि और शैक्षणिक सहयोग और सेवा भी प्रदान करती है।

क्या है मचब

ई.पी.सी. (Electronic Product Code) एक ऐसा खासा विश्वस्तरीय क्रमांक संख्या (Serial Number) है जो सप्लाई चेन के किसी भी स्तर पर किसी सामान की पहचान करता है। इसका फायदा यह होता है कि सप्लाई चेन के दौरान किसी भी समय उस सामान के बारे में सभी प्रकार की जानकारी रखी जा सकती है।

इलेक्ट्रोनिक प्रोडक्ट कोड (मचब) ग्लोबल नेटवर्कः

इलेक्ट्रोनिक प्रोडक्ट कोड ग्लोबल नेटवर्क एक ऐसा रूपरेखा (frame work) है जो सप्लाई चेन के किसी भी स्तर पर किसी सामान की सूचना तुरंत व ऑटोमैटिक तरीके से शेयर करता है। इस तरह स्वचालित ई.पी. सी. ग्लोबल नेटवर्क के जरिए सप्लाई चेन में सामान के बारे में समय–समय पर सभी जानकारी मिल जाने से कंपनियों के काम में वास्तविक रूप से असरकारी पारदर्शिता आ सकेगी। मौजूदा दौर में उपलब्ध अत्याधुनिक तकनीकों व बेहतरीन मानव शक्ति की बदौलत ई.पी.सी ग्लोबल नेटवर्क किसी भी उद्योग या कम्पनी के लिए दुनिया के किसी भी हिस्सा में सप्लाई चेन के दौरान तुरंत अपने आप व एकदम सही जानकारी देने की क्षमता को बदौलत किसी सामान का सही स्थान बताने में सफल होगा।

ई.पी.सी. ग्लोबल नेटवर्क में मुख्य रूप से ये पाँच तत्व भाामिल रहते हैं।

(1) **आई डी सिस्टम** : आई डी सिस्टम में ई.पी.सी टैग्स व रिडर्स भाामिल है। ई.पी.सी टैग्स असल में RIFD डिबाईसेज (तरकीब) होते है जिसमें एक माईक्रोचिप व एंटेना लगा होता है इन्ही टैग्स पर ई. पी.सी लगे होते हैं। इन टैग्स को डिब्बों और सामानों पर चिपकाया जाता है, इस पूरी प्रक्रिया के खत्म होने के बाद ये टैग्स एक खास रेडियो फ्रिक्वेंसी भेजने में सक्षम हो जाते हैं। ई.पी.सी रिडर का काम ई पी सी मिडिलवेयर की मदद से इन्ही फ्रिक्वेंसी को पकड़ना और उन्हे पढ़ना है।

(2) **ईपीसी मिडिलवेयर** : ईपीसी मिडिलवेयर का काम आईडी सिस्टम द्वारा भेजी गई सूचनाओं को वास्तविक समय पर पढ़ना, समय–समय पर एलर्ट देना और ईपीसी इनफॉरमेशन सर्विसेज के अलावा कंपनी में पहले काम कर रहे इनफॉरमेशन सिस्टम तक इन सूचनाओं को पहुँचाने का है। वर्त्तमान में ईपीसी ग्लोबल एक ऐसा साफ्टवेयर विकसित करने का काम कर रहा है जिसके जरिये ई.पी.सी रीडर्स पूरे नेटवर्क व इनफॉरमेशन सिस्टमों तक ईपीसी रीडर्स द्वारा पढ़ी जा रही सूचनाओं का आदान प्रदान संभव हो सके।

(3) **ईपीसी आई.एस (EPC Information Service) :** अपने यूजर्स के लिए ईपीसी से जुड़ी सूचनाओं को ईपीसी नेटवर्क के जरिये ट्रेडिंग पार्टनर्स को मुहैया कराता है।

(4) **डिस्कवरी सर्विसेज** : यह कई सर्विसेज के मेल से बने एक ऐसे सूइट की तरह है जिसके जरिये यूजर किसी खास टैग के बारे में या तो सूचना ले सकता है, या सूचना लेने का आग्रह कर सकता है।

(5) **ईपीसी गलोबल एक्शन ग्रुप्सः** ईपीसी ग्लोबल एक्शन ग्रुपों को सब्सक्रिब्शन बेनिफिट के रूप में देखा जा

सकता है। इन्हें इस तरह से डिजाईन किया गया है, ताकि ये अलग–अलग उद्योगों के ग्लोबल यूजर्स को एक मंच पर ला सके और वे ईपीसी ग्लोबल नेटवर्क के लिए व्यापार और तकनीकी जरूरतों का निर्धारण कर सके। ये ईपीसी ग्लोबल नेटवर्क का इसके कार्यक्षेत्र का निर्धारण करने उद्योग के लिए स्टेंडर्ड का निर्माण करने व व्यापार के लिए इसे अपनाने जैसे क्षेत्रो में भी मदद करते है। इनमें तीन तरह के ग्रुप्स शामिल है – विजनेस एक्शन ग्रुप, हार्डवेयर एक्शन ग्रुप, व साफ्टवेयर एक्शन ग्रुप।

बिजनेस एक्शन ग्रुप

इस ग्रुप में उन कम्पनियों के प्रतिनिधि शामील हैं, जो ईपीसी ग्लोबल नेटवर्क टेक्नोलाजी का प्रयोग कर रही है यह प्रयोग करने की योजना बना रही हैं। ये ग्रुप बिजनेस जरूरतों का आकलन करते हैं व सप्लाई चेन को बेहतर बनाने के लिए आपस में आर.एफ.आई.डी. बाक्सों का आदान–प्रदान करते है। वर्तमान में दो तरह के विजनेस ग्रुप कार्यरत है। इनमें से एक फास्ट मूविंग कंज्यूमर गुड्स के क्षेत्र में तो दूसरा हेल्थकेयर व लाईफ साईंस के क्षेत्र में है।

इन तकनीको के सहारे ये कम्पनियाँ अपने सामानों के उत्पादन एवं बिक्री का सही जानकारी रखने में पूरी तरह सक्षम होगी। जिससे ये अपने सामान की कीमत आवश्यकता के अनुरूप घटाने बढ़ाने में सक्षम होगी। जिसके कारण बाजार में छोटे खुदरा व्यापारी के व्यापार पर बुरा प्रभाव पड़ेगा और उनकी दूकान बंद हो जाएगी। इस तकनीक के सहारे बड़ी कम्पनियाँ ग्राहक से मुँहमाँगा दाम वसूलने में सक्षम होगी तथा छोटे खुदरा व्यापारी को व्यापार से बाहर करने में सक्षम होंगे।

(लेखक सह–प्रांत संयोजक स्व.जा. मंच, झारखण्ड)

(पृष्ठ 33 का शेष जारी. . .)

घूमती कलम. . .

रखे। वक्ताओं ने स्थानीय उत्पादों और स्वदेशी विचारों को लोकप्रिय बनाने के इस प्रयास की सराहना की। युवा उपायुक्त सत्येन्द्र सिंह ने अपने इस कथन के लिए काफी तालियां बटोरीं कि चीन हमारे बाजारों को अपने उत्पादों से भर रहा है। उन्होंने ऐसे उत्पादों का बहिष्कार करने का आहवान किया। प्रांत संघचालक और कार्यक्रम के अध्यक्ष जगन्नाथ सहाय के इस कथन पर सब हैरान हुए कि उन्होंने अपने बचपन और युवा काल में ऐसे किसी मेले में शिरकत नहीं की। उन्होंने कहा कि जीवन के आखिरी पड़ाव पर मैं इस स्वदेशी मेले में आया हूँ और इसका श्रेय स्वदेशी जागरण मंच को जाता है। बहरहाल, मैं आयोजकों खासकर सचिंद्र बरियार और दीपक शुक्लाजी के इस प्रयास की सराहना करूंगा कि उन्होंने ऐसे नामचीन लोगों को एक मंच पर बुलाया और वैश्वीकरण के दुष्प्रभावों तथा स्थानीय उत्पादों को लोगों के बीच लोकप्रिय बनाने पर विचार–विमर्श करवाया। मेरा ध्यान खासतौर से उस एक दुकान पर गया, जहां स्थानीय स्तर पर बनाए जाने वाली तलवार और चाकू बिक रहे थे।

दस जनवरी को मैं रायपुर में लगे तीसरे मेले में गया। लोगों की भागीदारी और दुकानों के लिहाज से यह सबसे बड़ा मेला था। रविवार को हममें इतना साहस नहीं हो पाया कि हम राजेंद्र दुबे के साथ मेले में जाएं क्योंकि जो संदेश मिल रहे थे उनके मुताबिक मेले तक आने वाली सभी सड़कें लोगों की भीड़ के कारण जाम हैं। मेले के आयोजक हर दिन एक विशेष समुदाय को सांस्कृतिक कार्यक्रम के लिए बुलाते थे। मैं जिस दिन मेला देखने गया, उस दिन पंजाबी सभा का कार्यक्रम था। तलवारबाजी और लाठी भांजने वाले दृश्यों में मुझे पंजाब की झलक मिली। उनके हर कार्यक्रम को लोगों की खूब तालियां मिलीं। वास्तव में, विभिन्न वर्गों के लोगों को एक जगह पर लाने का यह एक अच्छा प्रयास था।

कैदियों द्वारा लगाए गए खाने के स्टॉल पर लोगों की अच्छी–खासी भीड़ थी। हैरान करने वाली एक बात यह थी कि हम मेले में जहां भी गए, जोशीले आयोजक प्रवीण जैन हर जगह मौजूद थे। एक अन्य घटना ने भी मेरा ध्यान खींचा। माइक पर यह घोषणा हो रही थी कि मेले में एक दुकानदार चीनी सामान बेचते हुए पकड़ा गया है और उसका पूरा सामान जब्त कर लिया गया है। घोषणा के दौरान श्रोताओं में स्वदेशी की भावना हिलोरें मार रही थीं।

सीबीएमडी के एक वरिष्ठ अधिकारी ने गर्व के साथ कहा कि रायपुर मेले के साथ ही अब तक देश में 150 ऐसे आयोजन हो चुके हैं। इसमें उन मेलों की संख्या शामिल नहीं है जो स्वदेशी जागरण मंच के स्थानीय कार्यकर्ताओं द्वारा लगाए जाते हैं। बोकारो मेला भी इसी श्रेणी में है। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने जिस जोश के साथ गणेश चतुर्थी के आयोजन की शुरुआत की थी, वैसा ही कुछ इन मेलों से भी सामने आ रहा है।

ग्लोबल वार्मिंग के लिए पश्चिम के देश जिम्मेदार : अरूण ओझा

स्वदेशी जागरण मंच भागलपुर द्वारा आयोजित स्वदेशी मेला का उद्घाटन मंच के राष्ट्रीय संयोजक श्री अरूण ओझा ने वैदिक मंत्रोच्चार के बीच परम्परागत तरीके से दीप प्रज्ज्वलित करके 23 जनवरी को किया। अपने उद्घाटन भाषण में श्री अरूण ओझा ने कहा कि आजादी के बाद नेहरू ने गांधी से हटकर अपने विचारों के अनुसार उद्योगों और शहरों को केंद्र मानकर विकास की प्रक्रिया शुरू की और ग्रामीण भारत उपेक्षित होता गया। आज ग्रामीण भारत अंधेरे, भूख, बेरोजगारी, पिछड़ेपन की बीमारी का प्रतीक है। अशिक्षा और रोजगार न होने से छोटे उद्योग–धंधे समाप्त हो गये हैं और उसके कारीगर शहर की मलिन बस्तियों में रोजगार ढूंढ रहे हैं। श्री ओझा ने कहा कि आज विकास का मतलब हो गया है आर्थिक वृद्धि। यह विकास नहीं, विकृति है और यह विकृति आयी है प्रकृति के साथ कसाई का व्यवहार करने से।

आज ग्लोबल वार्मिंग के लिए वास्तव में पश्चिम के देश ही जिम्मेदार है जिनके कारण हमारी सुन्दर पृथ्वी का स्वरूप बदलता जा रहा है। तीव्र औद्योगिक विकास, नगरीकरण, भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप के कारण विश्व व्यापी कार्बन चक्र प्रभावित हो रहा है। परंतु कोपेनहेगन में भारत की सरकार ने देश के हितों के साथ समझौता कर लिया। आज देश के प्रधानमंत्री एवं कृषि मंत्री एक–एक खाद्य वस्तुओं के नाम बताकर दाम बढ़वा रहे है। चीन के दबाव में सीमा पर सड़क निर्माण का कार्य रोक दिया जा रहा है। इस अवसर पर उद्घाटन समारोह के मुख्य अतिथि भारतीय स्टेट बैंक के क्षेत्रीय प्रबंधक श्री गोपाल प्रसाद ने कहा कि स्वदेशी मेला में सहयोग कर भारतीय स्टेट बैंक अपने दायित्वों का निर्वहन कर रहा है। कार्यक्रम की अध्यक्षता इर्स्टन बिहार चैम्बर ऑफ इण्डस्ट्रीज के अध्यक्ष श्री मुकुटधारी अग्रवाल ने की तथा इस अवसर पर कहा कि भारत सरकार की याजना ही नहीं है कि इस देश में लघु एवं कुटीर उद्योग फले–फूले।

छः दिनों तक चले मेला में करीब तीन लाख लोग मेला घूमने के लिए आए। मेला का मुख्य आकर्षण भारतीय रिर्जव बैंक द्वारा लगाया गया स्टॉल था जिसमें असली एवं नकली नोट में अन्तर करना सिखाया जा रहा था।

समापन समारोह में मंच के क्षेत्र सह–संयोजक श्री दिनेश मंडल, झारखंड के प्रदेश संयोजक श्री सचिन्द्र बरियार, बिहार के श्री दिलीप निराला, राष्ट्रीय परिषद सदस्य श्री संजीव चौधरी, झारखंड के सह–संयोजक श्री राजेश उपाध्याय, मेला के संयोजक श्री शिव शंकर तिवारी, जिला संयोजक श्री शेखर घोष इत्यादि उपस्थित थे।

– प्रस्तुति : दिलीप निराला